No. 1983
F

॥ ॐ ॥

श्री जिनाय नमः ॥

आगमानुसार मुंहपत्ति का निर्णय.

और

जाहिर उद्घोषणा नं० १-२-३.

कर्त्ताः—

परमपूज्य परमगुरु श्री १००८ श्री मन्महोपाध्यायजी श्री सुमतिसागरजी महाराजके लघु शिष्य पं० मुनि-श्रीमणिसागरजी महाराज.

छपवाकर प्रकट कर्त्ताः—

श्री कोटा आदि का जैन श्वेतांबर संघ.

तीन फार्म लक्ष्मीविलास स्टीम प्रेस इन्दौर में छपे और शेष सब ग्रंथ कोटा प्रिंटिंग प्रेस कोटा शहर में छपा.

श्रीवीरनिर्वाण सं० २४५३] [विक्रम सम्वत् १९८३.
कार्त्तिक शुदी ११.

प्रथम वार २०००० कॉपी.] भेट [मूल्य सत्य ग्रहण.

☞ इस सूचना को पहिले पढिये. ☜

यहसमय शांतिपूर्वक सबसे मिलकर रहनेका है, बहुत लोग खंडन मंडनके विवादकी पुस्तकें छपवाना नहीं चाहते, तोभी स्थानकवासियों की तरफ से मुख वस्त्रिकानिर्णय, गुरु गुणमहीमा, जैनतत्त्वप्रकाश, वगैरह ८-१० पुस्तकोंकी अनुमान ३०००० - ४०००० हजार प्रतियें छपकर प्रकाशित होचुकी हैं उन्होंमें भगवती, ज्ञाताजी, निरयावली, निशीथ, महानिशीथ आदि आगमोंके नामसे तथा आचार दिनकर, योगशास्त्र, ओघ निर्युक्ति आदि प्राचीन शास्त्रोंके नामसे और शिवपुराण आदि अन्यशास्त्रों के नामसे प्रत्यक्ष झूठ बोलकर व्यर्थ भोलेजीवोंको धोखे में डालनेके लिये हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेका ठहरायाहै और हाथमें मुंहपत्ति रखकर मुंह की यत्ना करके बोलने वाले सर्व जैनियों के उपर बहुत अनुचित आक्षेप किये व झगडा फैलाया, यह सब बातें सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्ध होनेसे भव्यजीवोंको सत्य बातका निर्णय होने के लिये मेरेको स्थानक वासियों की मुंहपत्ति बांधने संबंधी सब पुस्तकों का और सब शंकाओंका समाधान अच्छी २ युक्तियों पूर्वक सर्व शास्त्र पाठों के साथ इस ग्रंथमें लिखना पडाहै। स्थानक वासी, बाईस टोले, ढूंढिये व साधु मार्गी इन चार नामोंमें ढूंढिया नाम विशेष करके सर्वत्र प्रसिद्ध है तथा "ढूंढत ढूंढत ढूंढलिया सब, वेद पुराण कुरानमें जोई। ज्यों दही मांहीसु मक्खण ढूंढत, त्यों हम ढूंढियों का मत होई॥ १॥" इस प्रकार यह लोग ढूंढिया नाम स्वीकार करते हैं इसलिये मैंने इस ग्रंथमें ढूंढिया नाम लिखा है इसपर कोई नाराज न होंवे।

प्रेसवालोंकी कई तरहकी तखलीफोंसे यह ग्रंथ बहुत विलंबसे प्रकट हुआ है और छपाई में भी बडी गरबड रहगईहै इसलिये प्रेसदोष, दृष्टिदोष, लेखक दोषकी पाठक गण क्षमा करें। प्रथम जाहिर उद्घोषणा नंबर १-२-३ पढकर फिर मूल ग्रंथ पढें और सत्य तत्वही ग्रहण करें।

इसग्रंथको आपपढो, औरोंको पढाओ, मित्रोंको व आसपासके गांवोंमें भेजो, श्वेतांबर जैनों में घर घरमें प्रचार करो, तभी सत्य असत्यकी सर्वत्र परीक्षा होगी. सर्पकी कांचली की तरह झूठीबातरूप मिथ्यात्वको छोडना और चिंतामणिरत्नकी तरह सत्य बातरूप सम्यक्त्वको ग्रहण करना यही सच्चे जैनीका पहिला कर्तव्यहै। लघुकर्मी मोक्षगामी सत्य बात ग्रहण करतेहैं और गुरुकर्मी संसारगामी सत्य बातपर नाराज होतेहैं।

॥ ॐ ॥

॥ श्रीजिनाय नमः ॥

जाहिर उद्घोषणा नंबर १.

॥ मोक्ष प्राप्ति की इच्छा करने वालोंको सूचना ॥

पहिले इस लेख को पूरा २ अवश्य पढिये.

सुलहो विमाण वासो, एगछत्ता मेहीणि वि सुलहा ॥
दुल्लहा पुण जीवाणं, जिणंदवर सासणे बोहिं ॥ १ ॥

इस अनादि संसारचक्रमें जन्म-मरण-रोग-शोक-आधि-व्याधि उपाधि-संयोग-वियोग-गर्भावास-नरक-तिर्यंचादि अनंत दुःख भोगते हुए भी कभी पुण्ययोग से देवलोकमें वास होना तथा एकछत्र पृथ्वीका राज्य, लोकपूजा, सरस आहार, इष्टभोग वगैरह मिलने सुलभहैं परन्तु संसारके अनंत दुःखों का विनाश करके मोक्षका अक्षय सुख को देने वाले श्रीजिनेश्वर भगवान्के वचनोंपर शुद्धश्रद्धा (सम्यग् दर्शन) प्राप्त होना बहुत मुश्किलहै।

"**सम्यग् दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्ष मार्गः**" शुद्ध सम्यक्त्व, ज्ञान और चारित्र ही मोक्षका मार्गहै यह वाक्य जैनसिद्धांतों में प्रसिद्धही है, जबतक सम्यग् दर्शन, सम्यग् ज्ञान और सम्यग् चारित्र इन तीनोंकी प्राप्ति न होगी तबतक किसी भी जीवका मोक्ष हुआ नहीं, होगा नहीं, और हो सकेगाभी नहीं, इसलिये मोक्षप्राप्ति की इच्छाकरने वालोंको सम्यग् दर्शनादि इन तीनोंको अंगीकार करने चाहिये।

जबतक जिनेश्वर भगवान्के वचनोंपर शुद्धश्रद्धा न होगी तबतक सम्यग् दर्शन कभी नहीं होसकता, जबतक सम्यग्दर्शन न होगा तब तक सम्यग् दर्शनके बिना पदार्थका यथार्थ बोध कभी नहीं होसकता जबतक पदार्थका यथार्थ बोध न होगा तबतक सम्यग् ज्ञान नहीं हो

सकता, जबतक सम्यग् ज्ञान न होगा तबतक सम्यग् चारित्र की प्राप्ति कभी नहीं होसकती, इससे जिनेश्वर भगवान्की आज्ञा मूजिब चलना यही सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्र की प्राप्तिका हेतुहै, यही संसारी दुःखों का नाश करने वालाहै, यही मोक्ष देनेवाला प्रबल कारण है इस लिये संसारी दुःखोंसे छुटनेकी चाहना करने वाले आत्मार्थियों को जिनेश्वर भगवान्की आज्ञा मूजिब चलनाही परम हितकारीहै।

और आज्ञाविरुद्ध चलनेवाले चाहें बडे २ तपकरें, जपकरें, ध्यान करें, जिन गुणगावें, सूत्र-सिद्धांत पढें-गुणें-सुनें-सुनावें, साधुके पांच महाव्रत पालें, श्रावकके १२ व्रत पालें, दोनों समय प्रतिक्रमण करें, दयापालें, दानदेवें, शीलपालें, इत्यादि बहुत धर्मकार्य करें तोभी आज्ञा विरुद्ध होनेसे सब निष्फल हो जाते हैं. मोक्ष देने वाले नहीं होते, किंतु संसार बढाने वाले होते हैं।

देखो-' जमालि ' आज्ञा मूजिब चलता और शुद्ध प्ररूपणा करता तो बहुत कठिन (बडी उत्कृष्ट) क्रिया करनेवाला था सो उसी भवमें अवश्यही मोक्ष जाता परंतु भगवान्का एक वचन उत्थापन करनेसे उसकी बड़ी कठिन क्रिया; तपस्यादिभी सब निष्फल गई और हलकी नीचजातिका किलविषिया देव हुआ. वैसेही आज्ञा विरुद्ध चलनेवाले उत्सूत्रप्ररूपणा करने वाले और उनको समझाने परभी अपना झूंठा हठ नहीं छोड़ने वाले बहुत दयापालें तथा तपस्यादि धर्मकार्य करें तोभी अज्ञान कष्ट (काय क्लेश) से हलकी जातिके देवादि होवें या कपट क्रियासे तिर्यंच योनिमें जावें तो सेठ साहूकार राजा बाबूके वहां घोड़े हाथी आदि होकर काय क्लेशका फल भोगकर संसारमें परिभ्रमण करते हैं, फिर बोधीबीज सम्यक्त्व जैनधर्म मिलना बहुत मुश्किल होता है, इसलिये शास्त्रोंमें कहाहै कि—

" सम्मत्तं उच्छिंदिय, मिच्छत्तारोवणं कुणइ निय कुलस्स ॥ तेण सयलो वि वंसो, कुगइ मुह संमुहो नीओ ॥१॥ उस्सुत्त भासगाणं, बोहि-णासो अणंत संसारो ॥ पाणचए वि धीरा, उस्सुत्त तो नभासंति ॥२॥ उस्सुत्तमाचरंतो, बंधइकम्मं सुचिक्कणो जीवो ॥ संसारं च पवड्ढई, माया मोसं च कुव्वई ॥ ३ ॥ उम्मगदेसओ, मग्गनासओ गुढाहियय माइलो ॥ सढसीलो य ससल्लो, तिरियाउं बंधए जीवो ॥ ४ ॥ उम्मग देसणाए, चरणं नासंति जिणवरिंदाणं " ॥ इत्यादि—

देखो—ऊपरकी गाथाओंका भावार्थ ऐसाहै कि-जो पुरुष जिनाज्ञा के अनुसार सत्य बातरूप शुद्धश्रद्धाका निषेध करके अपने मतपक्षकी झूंठी बातरूप मिथ्यात्वको अपने कुलमें याने-समुदायमें स्थापन करे, वह अपने समुदायकी सद्गतिका नाशकरके दुर्गतिमें डालनेका दोषी होताहै ॥ १ ॥ उत्सूत्र (शास्त्र विरुद्ध) प्ररूपणा करने वालेको बोधीबीज सम्यक्त्वका नाश होताहै और अनंत संसार बढताहै, इसलिये प्राण जानेपरभी जन्म मरणादि दुःखोंसे डरनेवाले धीरपुरुष कभी उत्सूत्रप्ररूपणा नहींकरते ॥२॥ उत्सूत्रप्ररूपणा करनेवाला अपने चिकने (गाढ मजबूत) कर्मोंका बंध करताहै, कपट सहित माया मृषा बोलताहै तथा संसार बढाताहै, ॥३॥ जिन आज्ञाके अनुसार सत्य बातको झूंठी बतलाकर निषेध करनेवाला और उन्मार्गकी अपनी कल्पित झूंठी बात को सत्य कहकर स्थापन करनेवाला गूढ कपटी अंतर मिथ्यात्वरूप शल्य सहित होनेसे तिर्यंच योनिके आयुष्यका बंध करताहै ॥४॥ और उन्मार्गकी बात जमानेसे जिनेश्वर भगवान्का कहाहुआ पंच महाव्रतरूप अपने चारित्र धर्मका नाश करताहै. इत्यादि बहुत बातें शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करनेवाले के लिये लिखी हैं।

और यहबात सर्वजैन समाजमें प्रसिद्धहै कि-कोईभी प्राणी शास्त्रका एकपद, एकअक्षर या काना-मात्र-बिंदुकीभी उत्थापना करे या अर्थ उलटा करे वा पहिलेका पाठ निकाल कर; नया दाखिल करके सूत्रको और अर्थको उलट पुलट करदेवे तो वह अपने सम्यक्त्वका और चारित्रका नाश करके मिथ्यादृष्टि अनंत संसारी होताहै।

तथा सच्चे उपदेशसे एक जीवको सम्यक्त्वी बनानेसे वह जीव परंपरासे मोक्ष जाताहै, उससे ८४ लक्ष जीवायोनिके सर्वजीवोंको अभय दान देताहै, उसका लाभ सच्चा उपदेश देनेवालेको मिलताहै, और मिथ्या उपदेशसे किसी जीवको सम्यक्त्वसे भ्रष्ट करके मिथ्यात्वमें डालनेसे वह संसारमें रूलताहै, उससे ८४ लक्ष जीवायोनिकी घातकरताहै, उसका पाप मिथ्याउपदेश देनेवालेको लगताहै, इसलिये मिथ्याउपदेश देनेवाला ८४ लक्ष जीवायोनिका घातक महान्दोषी समझा जाताहै.

और जो कोई साधु होकरके भी कभी बडीजीवहिंसा करे, चौरी करे, किसी से व्यभिचार सेवे, धनादि परिग्रह रक्खे और रात्रिभोजन

करे तो उसके पापसे वह अकेलाही डूबताहै, उसपापसेभी मिथ्याउपदेश देनेवाला अपनी आत्माको व अपने सर्वभक्तोंको डुबाने वाला होनेसे अनंत-गुणा अधिक पापी होताहै तथा मिथ्यात्वकी परंपरासे अनेक जीव डूबतेहैं और जीव हिंसादि सब पापकर्मोंकी आलोयणा (प्रायश्चित्त) हो सकती है उससे वह पापकर्म छूटभी सकतेहैं, परंतु मिथ्या उपदेश देनेवाले उत्सूत्र प्ररूपककी तो कोई आलोयणाभी नहीं होसकती, उसको तो 'गौशाले' की तरह संसारमें उसके विपाक भोगनेही पडतेहैं ।

तथा शरणे आयेकी रक्षा करना यह उत्तम पुरुषका श्रेष्ठ धर्महै, परन्तु विश्वास जानकर शरणे आनेवालोंका नाश करनेवाला विश्वास-घाती महापापी कहा जाताहै. तैसेही संसारी दुःखोंका नाश करनेके इरादेसे मोक्षमार्गका सच्चा रास्ता बतलानेके विश्वाससे सत्य धर्म उपदेश सुननेको आनेवाले भव्यजीवोंको जिनाज्ञा विरुद्ध होकर मिथ्या उपदेश देकर मिथ्यात्वमें डालनेवाला शरणेआयोंका शिरछेदन करनेवालेसे भी अधिक दोषी होता है।

ऐसे मिथ्या उपदेश देनेवालेको मानने-पूजने वाले, उसका वचन माननेवाले, संगकरने वाले अपने सम्यक्त्वको हानि पहुंचाते हुए मिथ्यात्वी बनतेहैं, जिनाज्ञाको उत्थापन करतेहैं, तथा अपना धर्म कर्म व्यर्थ गमाते हैं और संसार बढातेहैं. इसलिये मोक्षजानेकी चाहना करनेवाले आत्मार्थियोंको मिथ्याउपदेश देने वालोंका तथा मिथ्या बातका अवश्य त्याग करके जिनाज्ञानुसार सत्यबातका धर्मोपदेश देनेवालोंका संगकरके सत्यबातको ग्रहणकरके अपने धर्मकार्य-मनुष्यभवको सफल करना चाहिये तथा अपनी आत्माका कल्याण करना चाहिये ।

और कभी अज्ञान दशासे अपनेसे उत्सूत्र प्ररूपणा होगई हो या अपनी परंपरासे चलीआती हो तो उसको समझनेपर त्याग करनेमें लोक लज्जा या गुरु परंपराका हठ न रखना चाहिये. जो प्राणी अपने गुरुके मोहसे, समुदायके मोहसे, बहुत वर्षोंके मतपक्षके वेषके मोहसे, दृष्टिरागी परिचयवाले भक्तोंके मोहसे या लोकपूजादि किसीभी कारणसे उत्सूत्र प्ररूपणाकी झूठीबातको नहीं छोडते, जीवें तबतक उसीकोही चलाया करतेहैं सो बहुत लोगोंके मिथ्यात्वका हेतु होनेसे अपने मनुष्यभवको तथा जैन धर्मको हारतेहैं और मिथ्यात्वसे संसार बढाते हैं

इसलिये भवभिरुयोंको ऐसे झूंठे हठ छोडनेमें कभी बिलंब न करना चाहिये ।

सम्यक्त्वीके लक्षण.

शुद्धश्रद्धावाले शुद्ध सम्यक्त्वी सच्चे जैनीका यही लक्षणहै कि-झूंठीप्रपंचबाजी, मायाचारी, हठाग्रह न करे. अपनीभूलको समझने या समझानेपर तत्काल सुधारलेवे झूंठीबातको त्याग करनेमें लोकलज्जा व गुरुपरंपराका हठ न रक्खे, वहतो जिनाज्ञानुसार चलकर कर्मविटंबनासे दूर होकर आत्मकल्याण करनेकी ही हमेशा चाहनाकरे और जबतक संसारमें रहे तबतक भवभवमें जिनाज्ञानुसार धर्मकार्य करनेकी भावना भावे. देखो-जिनाज्ञानुसार चलनेवाला शुद्ध सम्यक्त्वी थोड़ा तपकरे, थोड़ा जपकरे, थोडा ज्ञानपढे, थोडा चारित्रपाले या चारित्र लेनेकी भावना रक्खे, चारित्र धर्मपर; जिन आज्ञापर गाढ (दृढ) अनुराग रक्खे और जीवदया दान शीलादि यथा साध्य थोडे २ धर्मकार्य करे तो भी वो बडवृक्षके बीजकी तरह बहुत फलदेनेवाले होतेहैं. तथा सूर्यकी किरणोंकी तरह मिथ्यात्व-अज्ञानरूपी अंधकारका नाशकरके मोक्षनगर में जानेके लिये रास्तामें कर्मरूपी कीचडको सूखाकर मोक्षनगरका रास्ता साफ करतेहैं और सम्यग्ज्ञानका प्रकाश करनेवाले होतेहैं उससे श्रेणिक महाराज व कृष्ण वासुदेव वगैरह महानपुरुषोंकी तरह थोड़े धर्मकार्यभी निर्विघ्नतापूर्वक शीघ्र मोक्षदेनेवाले होतेहैं इसलिये शुद्ध श्रद्धासहित जिनाज्ञा मूजब थोड़े धर्म कार्य करने से भी आत्महित होता है, सर्व कर्मोंका नाश होताहै, जन्म-मरणादि दुःख विनाश होतेहैं और मोक्ष मिलनेसे अक्षय सुखकी प्राप्ति होती है.

मिथ्यात्वीके लक्षण.

जोप्राणी पांच महाव्रत लेकर ऊपरसे साधुका वेषधारणकरले, परंतु उसके अंतरमें यदि मिथ्यात्वका वास होतो वह प्राणी हजारों सत्य बातोंको छोडकर किसीतरहके झूंठे आलंबन खडे करके सत्यबातको उत्थापन करताहै और झूंठीबातको स्थापन करनेके लिये बड़ापरिश्रम करताहै. अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी होताहै वह अपने मनमें दूसरे सामने वालेकी सत्यबातको न्यायपक्ष से समझने परभी सिर्फ लोकलज्जा व पूजा मान्यताका अभिमान तथा गुरुपरंपराके आग्रहसे जानबूझकर

अपना असत्यमत स्थापनकरनेके लिये न्यायमार्गको छोडकर उद्धत्ताई से सत्यबातका निषेध करताहै अन्यायमार्गको ग्रहणकरताहै ऐसे प्राणी के लोकलज्जा पूजामान्यता गुरुपरंपरादि सब इसभवमें यहांही धरेरहते हैं और झूंठेहठाग्रहसे कर्मबंधन होतेहैं उसके विपाक गोष्ठामाहिल, त्रैराशिक वगैरह निन्हवोंकी तरह संसारमें भोगने पड़तेहैं इसलिये हे जैनी नाम धारण करनेवाले भव्यजीवों झूंठेहठको छोडो और सत्यबातको ग्रहणकरो उससे तुम्हारे आत्माका कल्याण हो.

अनादि मर्यादाका उल्लंघन.

देखो अनादि प्रवाह मूजब जिनाज्ञानुसार अनेक गुणवाली सत्य बातके गंभीर आशयको गुरु गम्यतासे और विवेक बुद्धिसे समझे बिना अपनी अल्पमतिकी कल्पनासे कोई कार्यमें यदि लाभ समझकरके भी किसी प्रकारसे नयीबात शुरू करें तोभी तत्वदृष्टिसे वह हानि की हेतु होतीहै तथा अगाडी जाते बडे अनर्थ करनेवाली होतीहै. देखिये जिनाज्ञानुसार अनादिकालसे सर्व जैनमुनियोंको हाथमें मुंहपत्ति रखकर बोलते समय मुंहकी यत्ना करके बोलनेकी प्रवृत्ति चली आतीहै तोभी अनुमान विक्रम सम्वत् १७०९ में प्रथमही 'लुंकेमत' के 'लवजी' साधु ने अपनी कल्पनासे एकनई युक्ति निकाली कि-खुलेमुंह बोलनेसे हिंसाहोती है, वार वार उपयोग रहता नहीं इसलिये मुंहपत्ति मुंहपर बांध लें तो उससे दया पलेगी, कभी खुलेमुंह न बोलना पडेगा- ऐसा विचार कर हमेशा मुंहपर मुंहपत्ति बांधनेकी नईरीति चलाई परन्तु तत्वदृष्टिसे दयाके नामसे चलाई हुई यह रीति दयाकी जगह ज्यादाहिंसा करनेवाली होगई और मिथ्यात्व फैलनेरूप बड़ा अनर्थ करनेवाली हुई.

देखो अब लवजीकी परंपरावाले ढूंढिये कहतेहैं कि-'हमेशा मुंहपत्ति बांधनेवाले कहीं २ दूर दूर अनार्य देशोंमें चलेगये होंगे इसलिये लवजीका हमेशा मुंहपत्ति बांधना नवीन मालूम पड़ा' ढूंढियोंका यह कहना प्रत्यक्ष झूंठहै क्योंकि-गुजरात, काठियावाड, कच्छ, मारवाड़, मालवा, मेवाड, पूर्व, पंजाब, मध्यप्रांत, दाक्षिण वगैरह देशोंमें लाखों जैनी रहते थे उन देशोंमें हजारों साधु-साध्वी विचरते थे परन्तु किसी भी देशमें कोई भी जैन साधु हमेशा मुंहपत्ति बांधने वाला नहीं था और जैन समाज में बहुत से जैनी श्रावक लक्षाधिपति व क्रोडाधिपति व राज्य मान्य बड़े २ गृहस्थ मौजूद थे सो लाखों-करोडों रुपये दानादि धर्मकार्योंमें खर्च

करतेथे, जिन्होके दानसे हजारों लाखों मनुष्योंका और पशुओंका पालन होताथा. ऐसे दातार धर्मी व गुरु भक्त जैनियोंके देशोंमें किसी जगह भी हमेशा मुंहपत्ति बांधनेवाला कोईभी साधु न मिला तोफिर दूर २ के अनार्य देशोंमें कैसे मिल सकताहै, कभी नहीं. और अनार्यदेशों में साधुको जाना कल्पता नहीं, वहां शुद्ध आहारादि मिलसकते नहीं तथा जैसा धर्म कार्यों के उपदेशका लाभ आर्यदेशोंमें मिलताहै वैसा लाभ अनार्य देशोंमें कभी नहीं मिलसकता, इसलिये हमेशा मुंहपत्ति बांधने वाले साधु कहीं २ दूर २ अनार्य देशोंमें होनेका बहाना बतलाना सर्वथा झूंठ है.

फिरभी देखिये-इस देशमें पहिले बडे २ दुष्काल पडेथे. तोभी जैन साधुओंको आहार मिलताथा. आहारके अभावसे आर्यदेश छोडकर कोई भी जैनसाधु अनार्यदेशमें नहीं गयाथा और उसके बादभी इस देशमें लाखों जैनियोंमें व करोडों सनातनधर्म वालोंमें ढूंढियोंके पूर्वजोंको आहार नहीं मिला तथा कुछभी धर्म देखनेमें न आया इस लिये दूर २ के अनार्य मलेच्छ देशोंमें जाना पडा, बडे अफसोसकी बातहै कि अपनी नईबातको प्राचीन ठहरानेके लिये जैनसमाजको व सनातनी उत्तम हिंदुओंको आहार न देनेका व कुछभी धर्म न होनेका कलंक रूप ऐसी २ कल्पित झूंठी बातें बनानेमें ढूंढियोंको कुछभी विचार नहीं आता इसलिये ऐसी प्रत्यक्ष झूंठी गप्प चलाकर लवजीकी हमेशा मुंहपत्ति बांधनेकी बातको सच्ची साबित करना चाहते हैं सो कभी नहीं होसकती.

फिरभी देखिये विचार करिये-इस आर्य खंडमें भगवान्ने पंचमकाल में जैनशासनमें २१ हज़ार वर्ष तक अखंड परंपरासे साधु होते रहेनेका फरमायाहै जिसमें बहुतसे साधु शिथिलाचारी होंगे, थोडे आत्मार्थी शुद्ध संयमी होंगे ऐसा कहाहै परन्तु सर्व भ्रष्टाचारी होजावेंगे, कोईभी शुद्धसाधु न रहेगा. इसप्रकार संयमी साधुओंका अभाव किसी समयभी नहीं बतलाया, जिसपर भी ढूंढिये लोग भगवान्के वचन विरुद्ध होकर सर्व साधुओंको भ्रष्टाचारी ठहरा कर इस आर्य खंडमें शुद्ध साधुओंका सर्वथा अभाव बतलाते हैं और हमेशा मुंहपत्ति बांधनेके नये मत वालोंको शुद्ध साधु ठहरातेहैं यहभी प्रत्यक्ष उत्सूत्र प्ररूपणा है।

ढूंढिये कहतेहैं कि लवजीने आगम देखकर मुंहपत्ति बांधीहै उसीके अनुसार हमलोगभी आगमप्रमाण मूजब हमेशा मुंहपत्ति बांधतेहैं, यह भी

प्रत्यक्ष झूठहै किसीभी आगममें हमेशामुंहपत्ति बांधीरखनेका नहीं लिखा. पाठकगण ढूंढियोंके आगम प्रमाणकी बातोंके थोडेसे नमूने देखेंः—

१ भगवतीसूत्रके १६ वें शतकके दूसरे उद्देशमें शक्रेंद्रके अधिकार में शक्रेंद्र अपने मुंहआगे हाथ या वस्त्र रखकर बोले तो निर्वद्यभाषा बोले, ऐसा भगवान्ने फरमायाहै. इसबातको आगेकरके ढूंढिये साधु अपने मुखपर हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहरातेहैं, सो उत्सूत्र प्ररूपणाहै, क्योंकि भगवान्ने जीवदयाके लियेही बोलनेके समय उसी वक्त मुंहआगे वस्त्ररख ने की आज्ञादीहै सो इस आज्ञा मूजिब चलनेवालोंको बोलनेके समय अपने मुंहआगे वस्त्र रखना योग्यहै परन्तु इस आज्ञाके विरुद्ध होकर अपने मुंहपर हमेशा बांधनेका ठहरानेवाले भगवानकी आज्ञा उत्थापन करतेहैं. देखिये विचारकरिये-अगर भगवान् बांधनेमें लाभजानते तो मुंहआगे रखनेका कभी न बतलाते किन्तु बांधनेकाही बतलाते मगर हमेशा बांधनेमें अनेक दोष लगतेहैं इसलिये बांधनेकी आज्ञा न दी, जिसपरभी अपनी मति कल्पनासे हमेशा बांधनेका ठहराने वाले प्रत्यक्ष झूंठा हठाग्रह करतेहैं।

२ इन्द्र के अधिकारवाले पाठ से मुंहपर बांधने का अर्थ निकालोगे तो इन्द्रकेभी बांधनेका ठहरजावेगा. अतित-अनागत-वर्तमान कालमें अनंत इन्द्रहोगये वो सर्व तीर्थंकरमहाराजोंकी सेवाभक्तिमें हरसमय आतेहैं परन्तु किसीभी इन्द्रने अपना मुंह बांधा नहीं, इसलिये जैसे इन्द्र बोलते समय मुंहआगे वस्त्र रखताहै. वैसेही ढूंढियोंकोभी इन्द्रकी तरह बोलते समय अपने मुंहआगे वस्त्र रखना योग्य है. मुंहआगे वस्त्र रखनेका दृष्टांत बतलाकर फिर बाँधनेका ठहरानेवाले मायाचारीसे भोलेजीवों को उन्मार्ग में डालते हैं, और भगवती सूत्र के नामसे बडा अनर्थ करते हैं।

---

३ भगवतीसूत्रके ७ वें शतक के ३३ वें उद्देशमें 'जमाली' के दीक्षा के अधिकारमें तथा ज्ञाताजीसूत्रके प्रथम अध्ययनमें 'मेघकुमार' के दीक्षाके अधिकारमें जमालि-मेघकुमारके दीक्षासमय लोचकरने योग्य चारअंगुल केशरखकर बाकीके शिरके केश काटनेके समय राजकुमारोंको अपने नाककी दुर्गंधि न लगने पावे इसलिये गृहस्थी नाईयोंने धनके लोभ व राजाओंकी आज्ञासे धोती-दुपट्टे जैसे वस्त्रके मुखकोशसे थोडीदेरके लिये नाक और मुंह दोनोंबांधकर राज्यकुमारोंके केश काटेथे, इस प्रमाण को आगे करके ढूंढिये साधुपनेमें हमेशा मुंहपत्ति बांधीरखनेका ठहराते

हैं यहभी प्रत्यक्ष उत्सूत्र प्ररूपणाही है क्योंकि दीक्षालेकर राजकुमार मुनियोंने मुंहपत्तिसे मुंह बांधा नहीं था इसलिये गृहस्थ नाईके मुंहबांधनेकी बातको आगेकरके भोले जीवोंको भ्रममें डालकर हमेशा मुंहप[त्तिसे मुंहबां]धनेका मत स्थापन करना बड़ी भूलहै। अगर गृहस्थ नाईकी तरह ढूंढिये मुंह बांधना मानते होवें तब तो मुखकोश जैसा लंबा वस्त्र लेकर नाक मुंह दोनों बांधने चाहिये, जिसके बदले नाक खुला रखकर अकेला मुंहबांधनेका ठहराना सर्वथा अनुचित है।

---

४. विपाकसूत्रके प्रथम अध्ययनमें गौतमस्वामी मृगाराणीके जन्मांध बहुत दुःखी और रोगीष्ट मृगापुत्रको देखनेके लिये गये, तब मृगापुत्रके ठहरनेके दुर्गंधी वाले भूमिघरका दरवाजा खोलनेके समय मृगाराणीने वस्त्रसे पहिले अपना मुंहबांधा और दुर्गंधीका बचाव करनेकेलिये गौतमस्वामीको भी कहा कि आपभी अपनी मुंहपत्तिसे मुंह बांध लें. इस बातसे साबित होताहै कि गौतमस्वामीके मुंहपर मुंहपत्ति पहिले बांधी हुई नहीं थी, किंतु हाथमें थी. इसलिये मृगाराणीने दुर्गंधीका बचाव करने के लिये मुंहपर बांधनेका कहा, यदि पहिलेसे बांधी हुई होती तो फिर दूसरी बार बांधनेका कभी नहीं कहती, यह बात अल्पमति वाले भी अच्छी तरहसे समझ सकते हैं, तोभी ढूंढिये लोग इस सत्य बातको उडानेके लिये और अपनी कल्पित बात को स्थापन करनेके लिये कहतेहैं कि मृगाराणीने नाक बांधनेका कहाहै, ऐसा ढूंढियोंका कहना सर्वथा झूठहै "मुहपोत्तीयाए मुह बंधेह" मुंहपत्तिसे मुख बांधो, ऐसा मूल पाठ होने परभी नाक बांधनेका कहना प्रत्यक्ष झूठहै और गौतमस्वामी के तथा मृगाराणी के लिये दुर्गंधीका बचाव करने संबंधी एकही अधिकारमें एकही समान पाठ होनेसे यदि गौतमस्वामीका पहिलेसे मुंहबंधा हुआ मानोंगे तो मृगाराणीकाभी मुंह पहिलेसे बंधा हुआ ठहर जावेगा और मृगाराणीका मुंह खुला मानोंगे तो गौतमस्वामीका भी मुंह खुला मानना पडेगा. एकही बात में, एकही संबंध में दोनोंके लिये मुंह बांधनेका समान पाठ होनेपरभी मृगाराणीका मुंह खुला और गौतमस्वामीका मुंह बंधा हुआ ऐसा पूर्वापर विरोधी (विसंवादी) उलट पुलट अर्थ कभी नहीं होसकता इसलिये गौतमस्वामीका पहिलेसे ही मुंहबंधा हुआ ठहराना बडी भूल है।

५. फिरभी देखिये यह बात प्रत्यक्ष अनुभव सिद्धहै कि ढूंढिये साधु हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखतेहैं वह लोग कभी दुर्गंधी वाले रास्ते होकर जावें तो उन्होंको कोईभी दूसरे लोग मुंहपत्तिसे मुंह बांधनेका नहीं कह सकते और जिन्होंके मुंह खुले होंगे उन्होंको दुर्गंधीकी जगह मुंह बाधनेका कह सकतेहैं इसी तरहसे गौतमस्वामीकेभी पहिलेसे मुंह बंधा हुआ नहींथा इसलिये मृगाराणीने मुंहपत्ति से मुंह बांधनेका कहाहै. अगर कहा जाय कि दुर्गंधी तो नाकसे आतीहै परंतु मुंहसे नहीं. यहभी अनसमझ की बातहै, क्योंकि उबासी वगैरह करते समय या बातें करते समय नाक-मुंह दोनोंसे श्वासोश्वास आताहै और दुर्गंधभी नाक-मुंह दोनों से पेटमें जातीहै इसलिये मुंहबांधो ऐसा कहनेसे नैगमनयके मतसे सामान्यपने नाक-मुंह दोनों बांधनेका अर्थहोताहै। इसलिये अतीवगहन आशय वाले आगम वचनोंका भावार्थ समझे बिना मुंहसे पेटमें दुर्गंधी जानेका निषेध करना और गौतमस्वामीके पहिलेसेही मुंहबंधा ठहराने बाबत कुयुक्तियें करना प्रत्यक्ष उत्सूत्र प्ररूपणाहै।

---

६. निरयावली सूत्रमें सोमिलतापसने अपने मुंहपर काष्ठमुद्रा याने-लकड़ेकी पटड़ी बांधीथी, ऐसा अधिकारहै. उसको देखकर ढूंढिये लोग जैनसाधुको हमेशा अपनेमुंहपर मुंहपत्ति बांधीरखनेका ठहराते हैं सो सर्वथा उत्सूत्र प्ररूपणाहै. क्योंकि सोमिल ब्राह्मणने पहिले श्रीपार्श्वनाथस्वामीके पास सम्यक्त्वमूल श्रावकके बारह व्रत लियेथे, श्रावक धर्म पालनकरताथा परंतु पीछेसे साधुओंकी संगतके अभावसे सम्यक्त्व से और श्रावक धर्मसे पीछा गिरगया, मिथ्यात्वी धर्म करने लगा तथा कंदमूल खानेवाले गंगानदीमें स्नान करनेवाले दिशापोषक तापसोंके पास तापसी दीक्षा ली और अपने मुंहपर काष्ठमुद्रा बांधकर मौन रहनेका नियमलिया, यह सब मिथ्यात्वीपनेकी क्रियाथी इसलियें पार्श्वनाथ स्वामीके एक भक्त देवताने सोमिल तापसको पांच रात्रितक बार-बार उपदेश देकर काष्ट मुद्रादि मिथ्यात्वी क्रिया छुड़वाकर सम्यक्त्व सहित श्रावकके १२ व्रत अंगीकार करवाये तब सोमिल तापस श्रावकधर्म पालन करने लगा परंतु पहिले जो काष्टमुद्रादि मिथ्यात्वी क्रिया की थी उस क्रियाकी आलोयणा न ली, उससे विराधक हुआ और आयुः पूर्ण करके शुक्रनामा ग्रहपनेमें उत्पन्न हुआ. यदि काष्ट मुद्रादि मिथ्यात्वी

क्रियाकी आलोयणा करलेता तो आराधक होकर वैमानिक देवलोकमें अवश्यही उत्पन्न होता. इसलिये सोमिल तापसके काष्टमुद्रासे मुंहबांधनेका दृष्टांत बतलाकर ढूंढियेलोग हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहराते हैं. सो प्रत्यक्ष ही श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाकी विराधना करके मिथ्यात्वी बनतेहैं।

७. फिरभी देखिये जैसे उस देवताने सोमिलको मिथ्यात्वी क्रियासे छुड़वाकर सम्यग्धर्ममें पीछा स्थापन किया. इसी तरहसे जिनेश्वर भगवान् के भक्त सर्व जैनियोंका यही कर्तव्यहै कि- सोमिलकी तरह हमेशा मुंहपत्ति बांधने वाले ढूंढियोंकी इस मिथ्यात्वी क्रियाको किसी भी तरह छुड़वाकर उन्होंको जिनाज्ञानुसार सम्यग्धर्ममें स्थापन करें, आराधक बनावें तो बड़ा लाभ होगा।

---

८. ढूंढिये कहतेहैं कि- "महा निशीथ" सूत्रके ७ वें अध्ययनमें लिखाहै कि- मुंहपत्ति बांधेबिना प्रतिक्रमण करे, वाचना देवे-लेवे, वांदणा देवे या इरियावही करे तो पुरिमड्ढका प्रायश्चित्त आवे. ऐसा कहकर हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहरातेहैं सोभी प्रत्यक्ष झूठहै, क्योंकि 'महानिशीथ' सूत्रके ७ वें अध्ययनमें आलोयणाके अधिकारमें मुंहपत्तिको अपने मुंहके आगे रक्खे बिना साधु प्रतिक्रमणादि क्रिया करे तो उसको पुरिमड्ढका प्रायश्चित्त आवे मगर मुंहआगे रखकर उपयोगसे कार्य करे तो दोष नहीं. इससे हमेशा बांधना नहीं ठहर सकता. और "कन्नेट्ठियाए वा मुहणंतगेण वा विणा इरियंपडिकमे मिच्छुक्कडं पुरिमड्ढं च" इस वाक्य का भावार्थ ऐसा होताहै कि-गौचरी जाकर पीछे उपाश्रय में आये बाद गमनागमन की आलोयणा करनेके लिये इरियावही करने वाला साधु प्रमादवश मुंहपत्तिको मुंह के आगे आड़ी डालकर कानोंपर रखकर इरियावही करे तो उस को मिच्छामिदुक्कडंका प्रायश्चित्त आवे और सर्वथा मुंहके आगे रक्खे बिना इरियावही करे तो उसको पुरिमड्ढं का प्रायश्चित्त आवे. इसतरहसे दोनों बातोंके लिये दो तरहके अलग २ प्रायश्चित कहे हैं सो इसका भावार्थ समझे बिना और आगे पीछेके पूर्वापर संबंधवाले पाठको छोड़कर बिना संबंध का थोड़ासा अधूरा पाठ भोले लोगोंको बतलाकर 'कानोंमें मुंहपत्ति डाले बिना इरियावही करे तो मिच्छामि दुक्कडंका या पुरिमड्ढंका प्रायश्चित आवे'

ऐसा उलटा अर्थ करतेहैं और इस वाक्यके प्रमाणसे हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहरातेहैं सो यहभी उत्सूत्र प्ररूपणाहै क्योंकि- देखो विचार करो, गौचरी जाकर पीछे उपाश्रयमें आये बाद इरियावही करनेवाला साधु कानोंमें मुंहपत्ति डाले बिना इरियावही करे तो प्रायश्चित्त आवे ऐसा अर्थ ढूंढिये करतेहैं इससे तो यही सिद्ध हुआ कि- जब साधु गौचरी गयाथा तब उसके मुंहपर मुंहपत्ति बांधी हुई नहींथी यदि पहिलेसेही मुंहपत्ति बांधी हुई होती तो उपाश्रयमें आये बाद इरियावही करनेके लिये कानोंमे मुंहपत्ति डालनेका कभी नहीं कहसकते, इसलिये "कन्नेठियाए" इत्यादि यह पाठ कानोंमें मुंहपत्ति डालने का निषेध करताहै और कानोंमें डालने वालेको प्रायश्चित्त बतलाताहै इससे ढूंढियोंकेलिये यह पाठ मुंहपत्ति बांधनेका साधक नहीं, किंतु बाधकहै इसलिये हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका झूठा हठाग्रह आत्मार्थियों को छोड़नाही योग्य है।

(गौतमस्वामीका और अईमत्ता कुमारका विचार)

९. ढूंढिये कहतेहैं कि गौतमस्वामी पौलाशपुरी नगरीमें गौचरी गयेथे तब अइमत्ता कुमारने गौतमस्वामीके जीमने हाथकी अंगुली पकड़ली और रास्तेमें बातें करते हुए आहार वहोरानेके लिये अपने राज महलमें लेगयाथा, उस वख्त गौतमस्वामीके मुंहपर मुंहपत्ति बांधीहुईथी, ढूंढियोंका ऐसाकहना प्रत्यक्ष झूठहै, रास्तेमें बातें करते हुए चले थे, ऐसा "अन्तगड़दशा" सूत्रमें नहीं लिखा. और साधुको रास्तेमें चलते हुए बातें करना कल्पताभी नहींहै, तोभी जैसे छींक वगैरह आवें तो खड़े रहकर नाक और मुंह दोनोंकी यत्ना करतेहैं, इसी तरह रास्तेमें चलते हुए यदि खास जरूरी बातें करने का काम पड़जावे तो खड़े रहकर मुंहपत्तिसे या चद्दरादि अन्य वस्त्रसे अथवा जिसतरह कई गृहस्थी लोग मुंहआगे दुपट्टेको खंधेपरसे आडा डालकर बातें करते हैं तैसेही साधुके डावे खंधेपर जो कंबली रहतीहै उसको मुंहआगे जीमने खंभेपर डालकर मुंहकी यत्ना करके गौतमस्वामी बातें कर सकते थे, इसमें हमेशा मुंह बंधा रखनेका किसीतरहसे साबित नहीं हो सकता इसलिये गौतमस्वामी के और अइमत्ता कुमार के दृष्टांत बतलाकर हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहराने वालोंकी बड़ी अज्ञानताहै।

(मुंहपत्ति हाथपत्ति का विचार)

१०. ढूंढिये कहतेहैं कि 'मुंहपर बांधे सो मुंहपत्ति और हाथमें रक्खे सो हाथपत्ति' ऐसी ऐसी कुयुक्तियें लगाकर भोले जीवों को भ्रम में डालतेहैं सोभी उत्सूत्र प्ररूपणा ही है क्योंकि देखोः-रजको दूर करने के काममें आनेवालेको रजोहरण कहतेहैं उसको बगलमें रक्खे तो भी रजोहरण ही कहेंगे परंतु बगल पुंछ कभी नहीं कहसकते. वैसेही मुंह-आगे रखनेके वस्त्रको हाथमें रखनेसे भी हाथपत्ति कभी नहीं कह सकते किंतु मुंहपत्ति ही कहेंगे। ढूंढिये भी आहार करने के समय मुंहपत्तिको गोडे पर या आसन पर रखतेहैं तो भी उसको मुंहपत्ति ही कहतेहैं परंतु गोडापट्टी या आसनपट्टी नहींकहते इसी तरहसे मुंहपत्तिको हाथमें रखने से भी हाथपत्ति कभी नहीं कहसकते किंतु मुंहपत्ति ही कहेंगे। और नैगम-संग्रह-व्यवहार नय के मतसे साधू मुंहपत्तिके लिये वस्त्रकी याचना करनेको जावे या याचना करे तथा वस्त्र ले, उसको भी मुंहपत्ति कहतेहैं उस मुंहपत्तिको उपयोग पूर्वक मुंहआगे रखकर यत्ना से बोलने वालों को हाथपत्ति कहकर मुंहपत्तिका निषेध करते हैं सो सर्वज्ञ शासन में नयवादका भंगकरके जिनाज्ञाकी उत्थापना करने वाले महान् दोषी बनतेहैं।

११. फिरभी देखिये-सर्वज्ञ भगवान् निष्फल क्रिया का उपदेश कभी नहीं देते तो भी ढूंढिये मुंहपत्ति को हमेशा मुंहपर बांधी रखतेहैं सो निष्फल क्रियाहै क्योंकि जब साधू दिनमें या रात्रिमें, मौनपने काउसग्ग ध्यानकरे अथवा महीना दो महीना वर्ष छः महीना काउसग्ग ध्यानमें खडारहे उस वक्त बोलनेका सर्वथा त्यागहोताहै तबभी हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेका ढूंढिये कहतेहैं सो निष्फल क्रियाकी प्ररूपणा करतेहैं और उपासकदशा, अंतगडदशा, अनुत्तरो ववाई, उत्तराध्ययन, निशीथादि आगमोमें मुंहपत्ति शब्द देखकर उसका भावार्थ समझे बिना मुंहपत्ति शब्द से हमेशा मुंहपर बांधनेका अर्थ करते हैं सो सर्वज्ञ शासनके विरुद्ध होनेसे उत्सूत्र प्ररूपणा ही है।

(एक मायाचारी की कुतर्क देखो)

१२. कोई २ ढूंढिये ऐसी भी कुतर्क करतेहैं कि सूत्रोंमें मुंहपत्ति चलीहै परंतु बांधने का नहीं लिखा वैसेही हाथमें रखनाभी नहीं लिखा, यहभी ढूंढियोंका कहना प्रत्यक्ष झूठहै. क्योंकि देखो प्रथम तो शक्रेंद्रके

अधिकारमें भगवती सूत्रमें मुहआगे वस्त्र रखकर बोलेतो निर्वद्य भाषा-बोले ऐसा अधिकारहै इसबातको ढूंढिये बहुत दृढता के साथ स्वीकार करते हैं और अपनी पुस्तकों में छपवातेहैं इसबात मुजब जब साधु हाथ में मुंहपत्ति रखेगा तभी बोलने के समय मुंहआगे रखकर बोल सकेगा इसलिये ढूंढियोंके माने हुए इस पाठके अनुसार भगवतीसूत्रके मूलपाठ मुजब हाथमें मुंहपत्ति रखना सिद्ध होता है।

१३. फिरभी देखो आचारांग सूत्रमें साधु को खांसी, उबासी, छींक करते समय अपना मुखढांक लेने का कहा है इसी से भी मुंहपत्ति हाथमें रखना ठहरताहै इसलिये जब छींकादि आवें तब नाक और मुंह दोनोंकी (मुंहपत्ति से) यत्ना हो सकतीहै यदि मुंहपत्ति बांधी हुई होवे तो खांसी-छींकादि करते समय मुखढकनेका सूत्रकार कभी नहीं कहते इसलिये हमेशा मुंहपत्ति बंधी रखना सर्वथा सूत्र विरुद्धहै और भगवती, आवश्यक, निशीथ, विपाक, आचारांगादि आगमानुसार मुंहपत्ति हाथमें रखकर कामपडे तब मुखकी यत्ना करना यह बात प्रत्यक्ष सिद्धहै जिस परभी हाथमें मुंहपत्ति रखना नहीं लिखा ऐसा कहनेवाले मायासहित झूठ बोलकर भोलेजीवोंको व्यर्थ भ्रममें डालतेहैं।

१४. फिरभी देखिये विवेक बुद्धिसे विचार करिये, रजोहरण और मुंहपत्ति यह दोनों उपकरण जीवोंकी रक्षा करनेके लिये ही साधु रखतेहैं इस बातसेही हाथ में रखना स्वयं सिद्धहै तोभी उसको 'हाथमें रखना नहीं लिखा' ऐसी कुतर्क करनेवालोंको अज्ञानी समझना चाहिये क्योंकि जब २ कार्य होवे तब तब रजोहरण और मुंहपत्ति हाथमें लिये बिनातो जीवोंकी रक्षा ही नहीं होसकती इसलिये ऐसी २ कुतर्क करके जिनाज्ञाको उत्थापन करना योग्य नहीं है।

१५. फिरभी देखो-हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखने से सर्वज्ञ शासन में अधूरीक्रिया करनेका दोषआताहै क्योंकि जब साधुको छींकादि आवे तब मुंह आगे मुंहपत्ति रख कर नाक मुंह दोनोंकी यत्ना करनी पडतीहै तथा नाक कान आंख आदि छोटे २ स्थानोंके उपर सचित्त रज वगैरह गिरजावें तो मुंहपत्ति से उसका प्रमार्जन करनेमें आता है और कभी दुर्गंधीकी जगह होकर जाना पडेतो मुंहपत्तिसे नाकमुंह दोनों ढक सकते हैं या बांधभी सकतेहैं इसलिये मुंहपत्ति हाथमें होवेतो जैसे बोलते समय मुंहकी यत्ना होतीहै वैसेही छींकादि करते समय या दुर्गंधी की जगह

नाक मुंह दोनोंकी यत्ना हो सकती है और मुंह परसे सचित्त रज वगैरह की प्रमार्जनाभी हो सकतीहै अगर बांधी हुई होवे तो यह सब कार्य नहीं बन सकते इसलिये मुंहपत्ति हमेशा बांधी रखनसे मुंहपत्तिसे करने योग्य सर्व कार्य अधूरे रहतेहैं, उस से मुंहपत्ति रखनेका पूराफल नहीं होसकता इसलिये सूत्र विरुद्ध होकर अधूरी क्रिया करने रूप हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखना योग्य नहीं है।

(देखो हलाहल झूंठ का नमूना)

१६. प्रवचनसारोद्धार (प्रकरण रत्नाकर भाग तीसरा), आचार दिनकर, ओघनिर्युक्ति, आवश्यक बृहद्वृत्ति, यतिदिनचर्य्या, योग शास्त्र वृत्ति, आदि सर्व प्राचीनशास्त्रोंमें तथा साधुविधि प्रकाश आदि सर्व आधुनिक शास्त्रोंमें "सम्पातिमा जीवा मक्षिका मशकादयस्तेषां रक्षणार्थं भाषमाणै र्मुखे मुखवस्त्रिका दीयते" तथा "मुखवस्त्रिका कराभ्यां मुखाग्रे धृत्वा" इत्यादि, इस प्रकार मुंहपत्ति हाथमें रखना तथा बोलते समय मुंहआगे रखकर बोलना और प्रतिक्रमणादि धर्मक्रिया करनी ऐसा खुलासा पूर्वक स्पष्ट लिखाहै तो भी ढूंढिये इन सर्वशास्त्रोंके नामसे हमेशा मुंहपर मुंहपत्ति बांधनेका ठहरातेहैं सो प्रत्यक्ष हलाहल झूठ बोल कर उत्सूत्र प्ररुपणा से उन्मार्ग बढाते हैं। बडे २ प्राचीन शास्त्रोंके नामसे भोले लोगों को भ्रममें डालनेमें ही ढूंढियोंने अपनी बहादुरी समझ रक्खी है, परन्तु ऐसी झूंठीप्रपंच बाजी करनेसे कर्म बंधन होनेका भय होता तो ऐसा अनर्थ कभी न करते आत्मार्थी भव्यजीवों को ऐसे झूठे प्रपंच को त्याग करना ही हितकारी है।

(थूंक में असंख्य जीवों की उत्पत्ति)

१७. हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखने से बोलते समय मुंहपत्तिके थूंक लगताहै मुंहपत्ति गीली होती है, उस में समय २ असंख्य पंचेंद्रीय संमूर्च्छिम मनुष्य उत्पन्न होते हैं और मरते हैं, यह पंचेंद्रीय जीवोंकी हिंसा का दोष हमेशा मुंहपत्ति बांधने वाले ढूंढियों को लगताहै जिस पर भी उस का झूठा बचाव करने के लिये ढूंढिये कहते हैं कि संमूर्च्छिम जीवों की उत्पत्ति के १४ स्थान बतलाये हैं उस में थूंक का १५ वां स्थान नहीं बतलाया इसलिये थूंकमें जीवोंकी उत्पत्ति नहीं होती यह भी ढूंढियों का कहना सर्वथा सूत्र विरुद्ध है क्योंकि देखो १४ स्थानों में मुख के मलमें तथा सर्व अशुचि पदार्थोंमें जीवोंकी उत्पत्ति होना बतलायाहै

सो थूंक मुखका मैलहै और अशुचि पदार्थ भीहै यह बात सर्व जगत प्रसिद्ध प्रत्यक्ष अनुभव सिद्ध है इस लिये थूंक में जीवों की उत्पत्ति होती है तथा १४ स्थानों के अन्दर ही है तिस पर भी ढूंढिये लोग थूंक को १४ स्थानों में और अशुचि प्रदार्थ में नहीं मानते यह बडी भूल है, सूत्र विरुद्ध है और जगत विरुद्ध भी है।

१८. फिर भी देखिये- बडे तपस्वी लब्धिवाले मुनि का थूंक लगाने से कुष्टादि रोग चले जाते हैं, यह बात जैन समाज में प्रसिद्ध है तथा "उववाई" आदि मूल आगमों में "खेलोसही पत्ताणं" इस पाठ की व्याख्या में प्रकटपने कही है और जैसे नाककी लाल, नाक का जल, व नाक का श्लेषम (सेडा) यह सब नाक के मैल के अंतरगत अशुचि में गिने जाते हैं, उन में जीवों की उत्पत्ति मानी है वैसे ही मुखकी लाल, मुख का जल, मुख का थूंक, मुख का झाग व कफ यह सब मुख के मैल के अंतरगत अशुचि में गिने जाते हैं इस लिये थूंक में असंख्य संमूर्च्छिम पंचेंद्रीय मनुष्यों की उत्पत्ति अवश्य होती है और उस की हिंसा का दोष थूंक की गीली मुंहपत्ति को मुंहपर बांधी रखने वाले सर्व ढूंढियों को जरूर लगता है. चाहे जितनी कुयुक्तियें करें तो भी इस हिंसा का बचाव किसी तरह से कभी नहीं हो सकता. इसलिये जिस आत्मार्थी भव्य जीव को इस हिंसा का बचाव करने की इच्छा होवे तो हमेशा मुंह पत्ति बांधी रखने का झूठा ढोंग छोडना ही हितकारी है।

(संवेगियोंकी बेदरकारी और ढूंढियोंका झूंठा प्रपंच.)

१९. "सम्यक्त्वमूल बारह व्रतकी टीप" नामा पुस्तक में मुंह पत्ति बांधने का लिखाहै ऐसा ढूंढियों का कहना प्रत्यक्ष झूंठ है क्यों कि "सम्यक्त्वमूल बारहव्रतकी टीप" प्रथमावृत्ति संवत् १९२८ में मुंबई ग्रंथसागर छापाखाना में छपी है उस में सामायिक व्रत के अधिकार में श्रावक को शास्त्र वांचते समय "त्रीजोचल दृष्टि दोष ते सामायक लिधां पछे दृष्टि नासिका ऊपर राखने मनमा सुद्ध उपयोग राखे मौनपणे ध्यान करे अने सामायकमां शास्त्र अभ्यास करवुं होयतो जयणा युक्त मुखे मुंहपत्ती देई दृष्टि पुस्तक ऊपर राखीने भणे तथा सांभले" इसलेखमें मुंहपत्ति हाथमें रखना लिखाहै सो पुस्तक पढने के समय मुंहपत्ति मुंहके आगे रखकर पढे, ऐसा स्पष्ट लेख होनेपरभी गुजराती भाषांतर करके संवत् १९३६ में केशवजी रामजी ने छपवाया उसमें

"मुखे मुंहपत्ती देई" इस लेखको बदलाकर "मुंहपत्ती मुखे बांधी" ऐसा झूंठा छपवा दिया उसके बाद फिर भी संवत् १९५४ में भीमसिंह माणेकने भी भूलसे वैसाही छपवादिया, प्रूफ सुधारने वाला ढूंढक श्रावक नौकरथा उसने पुस्तक छपवाते समय ऐसा अदल बदल करने का अनर्थ करादिया, इतने वर्ष होगये हजारों पुस्तकें फैल गई परन्तु किसी भी साधु श्रावक ने इस बात का ध्यान न दिया और ढूंढिये ऐसे २ झूठे बनावटी लेख आगे करके भोले जीवों को बतला कर व्यर्थ उन्मार्ग स्थापन करके मिथ्यात्व बढाते हैं उनोंको अपनी भूल का शुद्ध भावसे मिच्छामि दुक्कडं देना चाहिये।

(ढूंढिये भ्रम में पडकर भूलते हैं)

२०. प्रश्न व्याकरण, महानिशीथ ओघनिर्युक्ति आदि प्राचीन शास्त्रोंमें "मुहणंतगेण" शब्द आयाहै इसका अर्थ 'मुखानंतकं' मुखवस्त्रिका, मुंहपत्ति ऐसा होताहै, तोभी ढूंढियों की समझमें नहीं आया इस लिये "मुहणंतगेण" शद्ब देखकर मुंहपत्तिका 'दोरा' ऐसा गमारी अर्थ करके महानिशीथ, ओघनिर्युक्ति की चूर्णि आदि शास्त्रोंके नामसे दोरा डालकर मुंहपत्ति बांधनेका समझ बैठे हैं सो निष्केवल भ्रममें पडकर भूलतेहैं। "मुहणंतगेण" का अर्थ मुखवस्त्रिका है इसलिये दोरा का अर्थ कभी नहीं होसकता और ओघनिर्युक्ति आदि शास्त्रकारोंने 'बोलनेका कामपडे तब मुंहआगे मुंहपत्ति रखकर बोलना' ऐसा अर्थ स्पष्ट खुलासा सहित लिखदियाहै जिसपर भी प्रत्यक्ष शास्त्रकारोंके विरुद्ध होकर अपनी अज्ञान कल्पनासे ओघनिर्युक्ति आदि के नाम से हमेशा मुंहपर बांधनेका ठहराने वाले व्यर्थ ही बालचेष्टा जैसा हठाग्रहसे उन्मार्ग बढातेहैं।

(भुवनभानु केवलि आदि रासोंमें हमेशा मुंहपत्ति बांधना नहीं लिखा)

२१. ढूंढिये कहतेहैं कि भुवनभानु केवलि के रासमें हमेशा मुंहपत्ति बांधना लिखाहै यहभी झूठहै, क्योंकि इस रासमें रोहिणी नामा एक सार्थवाहकी लडकी को निंदा विकथा करनेका स्वभाव पडगया था सो अच्छी हित शिक्षा देने वालोंको भी उल्टा जवाब देती थी, जिन मंदिरमें देवदर्शन करनेको और उपाश्रयमें व्याख्यान सुननेको जावे

तबभी विकथा करने लगे. जब साध्वीजी ने रोहिणी को विकथा छोड़कर स्वाध्यायादि धर्म कार्य करनेका उपदेश दिया तब रोहिणी साध्वी के ऊपर नारज होकर क्रोधसे कहने लगी कि "मुंह मरड़ी तव ते कहेरे, साध्वीजी सुनो वात ॥ साधु जनने पण सर्वथारे, विकथा न वरजी जात ॥ १ ॥ गुरुणीजी मलि मलि म करो मांड ॥ न गमे मुजने पाखंड ॥ गुरुणीजी ॥ न तजाये अनर्थ दंड, जो जीभ थाय शतखंड ॥ गुरुणीजी ॥ २ ॥ मुंहपत्तिए मुख बांधीनेरे, तुमे बेशोछो जेम ॥ गुरुणीजी ॥ तीम मुखे डुचो देहीनेरे, बीजे बेसाय केम ॥ गुरुणीजी ॥ ३ ॥" ऐसे २ वक्रोक्तिके वाक्योंमें यहां मुंहपत्ति बांधने का अर्थ नहीं है किंतु मौन रखने का अर्थ होताहै. देखो मूलचरित्र में ऐसा पाठ है " बद्ध मुखमत्र तिष्ठंतं न कंचित्पश्यामः" तथा ३०० । ४०० वर्ष की पुराणी भाषामें भी "कोई मुंह बांधी बइसी रह्यउ न देखां" ऐसा लेखहै इसका भावार्थ यही है कि यहां पर मुंहबांधकर कोई नहीं बैठे, अर्थात्-सब लोग यहां बातें करतेहैं कोई मौन होकर नहीं बैठा और जिसतरह से तुम दूसरोंकी निंदा विकथा करनेमें मौन हो वैसेही (तिम मुखे डुचो देहीनेरे, बीजे बेसाय केम) हमारेसे मौन नहीं रहाजाता ऐसा आशयहै इस लिये रास बनानेवाले का पूरा पाठ छोडकर थोडे से अधूरे वाक्य भोले लोगों को बतला कर उलटा अर्थ का अनर्थ करके 'भुवनभानुकेवलिकेरास' के नामसे हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहरानेवाले मायाचारी की प्रपंच बाजीसे व्यर्थ अपने कर्म बांधतेहैं और दूसरोंको बंधवाते हैं।

---

२२. हरिबल मच्छी के रासमें हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका लिखा है यहभी ढूंढियोंका कहना झूठहै क्योंकि यह रास छपवानेवाले भीमसिंह माणेकने बंबई से मेरेको पत्र भेजाहै उसमें लिखाहै कि "सुलभ बोधी जीवडा, मांडे निज खट कर्म ॥ साधुजन मुख मुमती, बांधीहै जिन धर्म ॥ १ ॥" यह वाक्य भूलसे उलटा छपगयाहै सो दूसरी आवृत्तिमें सुधारनेमें आवेगा. इस लिये भूलसे छपेहुए वाक्य को आगे करके हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका आग्रह करना बडी भूलहै।

२३. सुरतमें श्रीमान् मोहनलालजीके ज्ञानभंडारमें तथा बडोदे में प्रवर्तक श्रीमान् कांतिविजयजी संग्रहीत ज्ञानभंडारमें हरिबलमच्छी के रासकी लिखी हुई ५—६ प्रतियें मौजूद हैं उन्होंमें "सुलभ बोधी

जीवडा मांडे निजखट कर्म ॥ साधुजन मुख मुमती बांधी कहे ? जिन धर्म ॥ १ ॥" ऐसा लेख है इसका भावार्थ यहहै कि फजर में उठकर श्रद्धावान् भव्यजीव जिनमन्दिर में जिनराजकी पूजा करें, गुरुकी सेवा करें, स्वाध्यायादि ६ धर्मकार्य करें. अब विचार करना चाहिये कि जैसे पर्युषणापर्व में अमारी घोषणाकी व्याख्या करनेके प्रसंगमें बकरीदकी व पशुबलिकी रौद्र हिंसाकी पुष्टि कभी नहीं होसकती वैसेही जिन मंदिरमें पूजा करनेके प्रसंगकी व्याख्या करनेमें प्रत्यक्ष मिथ्यात्वका हेतु रूप हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेका लेख कभी नहीं लिखा जासकता परंतु विपरीत बातका अतिशयोक्ति से प्रसंगवश उपहास कर सकते हैं. वैसेही हरिबलमच्छी के रास बनाने वालेने जिनपूजा, गुरुसेवा के प्रसंगसे अतिशयोक्ति में "साधुजन मुख मुमती बांधी कहे? जिन धर्म" यह वाक्य कहेहैं याने-ढूंढियेलोग मुंहपर मुंहपत्ति हमेशा बांधी रखने का कहतेहैं सो जैनधर्म विरुद्ध है ऐसा गंभीराशयसे मीठे वाक्य से उपहास कियाहै और लिखीत प्रतोंमें '(कहे ?) यह शद्व वक्रोक्तिवाचक था परंतु रास छपवानेके समय (क) अक्षर भूलसे रहगया होगा या "सम्यक्त्वमूल बाहर व्रतकी टीपकी" तरह किसी ढूंढक अनुयाई लेखकने जानबूझ कर 'क' अक्षर निकाल दिया होगा और 'हे' की जगह 'है' करके गुजराती भाषा बिगाड कर हिंदी भाषा बनाडाली, भूल से वैसा ही छपकर प्रकट हो गया उसको देखकर सब ढूंढिये भ्रममें पडगये हैं । इस लिये हरिबल मच्छी के रासके नामसे हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहराना सर्वथा झूठहै ।

---

२४. ढूंढिये कहतेहैं कि हितशिक्षाके रासमें हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका लिखाहै यहभी झूठहै क्योंकि देखो ढूंढिये साधु कभी दवाई लेनेके लिये, जल पीनेके लिये या कफ आदि थूकने के लिये नाटक के परदेकी तरह मुंहपत्तिको किसी समय नीचेके होठपर हटालेतेहैं, कभी डाढीपर खींच लेतेहैं, कभी एक कानपर से दोरेको हटा लेतेहैं उससे दूसरे कानपर ध्वजकी तरह मुंहपत्ति लटकने लगतीहै और कभी गाडी के बैलके जोतर (झूसर) की तरह गलेमें खींच लेते हैं इस लिये हित शिक्षा के रासके लेखकने ढूंढियोंको मुंहपत्ति की ऐसी विटंबना न कर नेकेलिये "मुखे बांधीते मुंहपत्ति, हेठे पाटो धारी ॥ अति हेठी दाढीथई

जोतर गले निवारी ॥ १ ॥ एककाने धज सम कही" इत्यादि उपहासके वाक्य लिखेहैं उसका आशय समझे बिना ऐसे २ प्रमाण आगे करके ढूंढिये लोग हमेशा मुंहपत्ति बांधना ठहरातेहैं पुष्ट करते हैं और बडी खुशी मनातेहैं यही बडी अनसमझ की बातहै ।

(शिवपुराणादिमेंभी हमेशा मुंहपत्ति बांधना नहींलिखा)

२५. ढूंढिये कहते हैं कि 'शिवपुराण' में "हस्ते पात्र दधानश्च तुंडे वस्त्रस्य धारकाः" इस वाक्यमें हमेशा मुंहपत्ति बांधना लिखाहै ऐसा कहते हैं सोभी झूठहै क्योंकि इस वाक्यमें हाथमें पात्र रखनेवाले और मुंहपर वस्त्र रखने वाले लिखेहैं। इसकाभावार्थ ढूंढियोंकी समझमें नहीं आया इसलिये हमेशा मुंह बांधनेका ले बैठे हैं देखो-हाथमें पात्र कहनेसे आठोही प्रहररात्रि-दिन हमेशा हाथ में पात्र नहीं लियाजाता किंतु जब आहार आदि कार्य होवें तब उस प्रयोजन के लिये लियाजाताहै. वैसेही मुंहपर मुंहपत्ति कहने से जब बोलनेका कार्य होवे तब मुंहपर मुंहपत्ति रखनेमें आती है परन्तु हमेशा बांधनेका नहीं ठहर सकता. जिसपर भी हमेशा बांधने का हठ करने वाले ढूंढियोंको मुंहपत्तिकी तरह सोते, बैठते, सूत्रपढते, व्याख्या वांचते वगैरह सर्व कार्योंमें हमेशा हाथमें पात्र भी रखना चाहिये और हमेशा हाथमें पात्र रखना मंजूर न करें तो हमेशा मुंहपत्ति बांधनेकी अज्ञानता का हठाग्रहको छोडदेना योग्य है ।

(नाभा में भी ढूंढिये हारगये थे)

२६. पंजाब देशमें 'नाभा' में मुंहपत्तिकी चर्चामें ढूंढियोंने हमेशा मुंहपत्ति बांधने बाबत 'शिवपुराण' का वाक्य आगे कियाथा उसपर वहांके मध्यस्थ विद्वानों ने अपने फैसलेमें ऐसे लिखाहै कि "आपके प्रतिवादीके हठके कारण और उनके कथनानुसार हमें शिवपुराणके अवलोकनकी इच्छा हुई. बस इस विषयमें उसके देखने की कोई आवश्यकता नहीं थी. ईश्वरेच्छासे उसके लेखसे भी यही बात प्रकट हुई कि वस्त्रवाले हाथको सदा मुखपर फैंकता है इससे भी प्रतीत होताहै कि सर्व काल मुखवस्त्र के मुखपर बांधे रहने की आवश्यकता नहीं है किंतु वार्तालापके समय पर वस्त्रका मुखपर होना जरूरीहै" इस लेखमें हाथमें मुंहपत्ति रखना ठहरायाहै इस लिये 'नाभा' की चर्चा के नामसे हमेशा मुंहपत्ति बांधने का ठहराने वाले मायाचारी सहित प्रत्यक्ष मिथ्यावादीहैं ।

(ढूंढिये अपनी थोडी सी अकल खर्च करें)

२७. देखो ढूंढिये लोग संवेगी साधुओंको दंडी २ कहा करते हैं परन्तु संवेगी साधु हमेशा हर समय हाथमें दंडा नहीं रखते किन्तु आहार वगैरह के लिये बाहिर जाना पडे तब हाथमें धारण करतेहैं नहींतो उपाश्रयमें पडारहताहै। इसी तरहसे ढूंढियोंको अपने कथन मूजिब थोडीसी अकल खर्च करके विवेक बुद्धिसे विचार करना चाहिये कि बोलनेके समय मुंहआगे मुंहपत्ति रखने वालोंको मुखपर वस्त्र धारण करने वाले कहेजाते हैं उससे ढूंढियोंके ही दंडी २ कहनेके न्यायकी तरह हमेशा मुंहपर वस्त्र बांधा रखना नहीं ठहर सकता इसलिये हमेशा बांधने का हठकरने वालों की अनसमझहै। और श्रीमालपुराणमें भी जैनसाधुको हाथमें दंडा, मुखपर वस्त्र, बगलमें रजोहरण धारण करनेवाले लिखे हैं. सो यह तीनों वस्तु जब काम पडे तब उस २ कार्य के उपयोगमें ली जातीहैं नहीं तो पास में पडी रहतीहैं, इस बातसे भी यह तीनों वस्तु हमेशा बांधी रखनेका नहीं ठहर सकता। इसी तरह से 'अवतारचरित्र' में भी मुंहपत्ति शद्वका पर्याय मुखपट्टी नामामात्र लिखाहै उसको देखकर हमेशा बांधने का ठहराना बडी भूलहै।

(नाक और मुंह दोनों से जीव मरते हैं)

२८. ढूंढिये कहते हैं नाककी श्वास (हवा) से जीव नहीं मरते इस लिये हम नाक खुला रखते हैं, यहभी झूठ है क्योंकि नाकके श्वासोश्वासके झपाटे से छोटे २ जीवों की हिंसाका कहनाही क्या परन्तु डांस-मच्छर-मक्खी आदि भी नाकमें घुस जाते हैं और मरभी जाते हैं यह प्रत्यक्ष प्रमाणहै इसलिये नाककी गरम श्वाससे त्रस-स्थावर दोनों प्रकारके जीवोंकी अवश्य हानि होतीहै तथा बोलते समय मुंहकी श्वास बाहर निकलते ही फैलकर जल्दी ठंडी होजातीहै और नाककी श्वासतो १०-१५ अंगुल तक जोर से धमणी की तरह गरम २ चली जातीहै इसलिये मुंहकी श्वाससे भी नाककी श्वाससे जीवों को पीडा विशेष ज्यादे होती है और दिनभरके २४ घंटों में १-२ घंटे बोले तब मुंहसे जीवोंको पीडा होगी परन्तु नाकसे तो २४ घंटे हमेशा जीवों को पीडा होतीहै इसलिये ढूंढियोंकी सच्ची जीवदया तबही समझी जावे जब कि मुंहकी तरह नाक भी हमेशा बांधा रक्खें, नहीं तो दयाके नामसे भोले लोगोंको भ्रममें डालने का ढोंगही समझना चाहिये।

(मुंहपत्ति में दोरा डाल कर बांधना नहीं लिखा.)

२९. जब ढूंढियों को पूछने में आता है कि मुंहपत्ति में दोरा डाल कर बांधना किसी सूत्र में नहीं लिखा जिस पर भी दोरा क्यों डालते हो इसपर ढूंढिये कहते हैं कि जैसे साध्वीके साडेमें दोराडालने का नहीं लिखा तोभी दोरा डाला जाताहै वैसेही मुंहपत्तिमें दोरा डालने का नहीं लिखा तोभी समझ लेनाचाहिये ऐसा कहकर मुंहपत्तिमें दोरा डालना ठहरातेहैं, सोभी अनुचितहै क्योंकि देखो-साध्वीके साडेमें तो लज्जा ढकनेके लिये दोरा डालने में आता है परंतु मनुष्योंका मुंह लज्जनीय नहीं है इसलिये गुह्य और लज्जनीय स्थान बांधनेका दृष्टान्त बतलाकर जगतमें प्रकट और शोभनीय मुंह बांधनेका दोरा साबित करना बडी भारी निर्विवेकता है। दूसरी बात यहभी है कि जब कभी दुर्गंधी की जगह जाना पडे या उपाश्रय की प्रमार्जना करने के समय सूक्ष्म रजकण मुंहमें न जाने पावे इसलिये दोरा डाले बिनाही मुंहपत्तिको त्रिकोणी करके मस्तक के पीछेके भागमें गांठ आसके वैसी रीतिसे थोडी देरके लिये नाक-मुंह दोनों बांधनेकी मर्यादा बतलाईहै उसरीति को छोडकर अपनी कल्पनासे दोरा डालनेका तथा नाक खुला रखकर अकेला मुंहको हमेशा बांधनेका नया ढोंग चला कर सर्वज्ञ शासनकी हीलना करवाना सर्वथा अयोग्य है।

(बोलनेमें कभी उपयोग न रहे तोभी हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखना बहुत बुरा है)

३०. ढूंढिये कहतेहैं कि बोलते समय मुंहकी यत्ना करनेका कभी उपयोग न रहे तो दोष लगे जिससे हमेशा बांधी रखना अच्छा ही है उससे कभी उघाडे मुख बोलनेका दोष न लगे. यह भी ढूंढियों का कहना अनसमझका है क्योंकि साधुका धर्म ही उपयोगमें है, जिस को शुद्ध उपयोग नहींहै उससे शुद्ध संयम धर्म कभी नहीं पल सकता. देखोः- किसी को उपयोग न रहा भूलसे स्त्रीका रूप देखने लगगया उससे उसके आंखों पर हमेशा पाटा बांधा रखना कोई अच्छा नहीं मान सकता तथा किसी साधु को कभी चलनेमें उपयोग न रहा उस से कीडी-मेंडक वगैरह जीवोंकी हानि होगई जिससे चलनेकाही बंध करके एक जगह पडे रहना कोई भी अच्छा नहीं कहसकता किंतु उप-

योग रखकर चलने को ही अच्छा माना जावेगा. इसी तरह से कभी बोलते समय मुंहकी यत्ना करनेका उपयोग न रहे उससे हमेशा मुंह बांधा रखना कभी अच्छा नहीं ठहर सकता किंतु उपयोगसे यत्नापूर्वक बोलनाही अच्छा माना जावेगा।

३१. फिरभी देखोः- बोलनेमें मुंहकी यत्ना करनेका कभी उपयोग न रहने से हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ढूंढिये कैहते हैं, उसी तरह कभी छींक करते समय नाक की यत्ना करनेका उपयोग न रहे तो मुंहकी तरह ढूंढियोंको नाकभी हमेशा बांधा रखना चाहिये तथा चलने में उपयोग न रहनेसे दोनों पैरोंके दो पूंजनी भी हमेशा बांधी रखनी चाहिये और प्रतिलेखना करनी, गौचरी जाना, उपाश्रयकी प्रमार्जना करनी, प्रतिक्रमण करने में उठ-बैठ करना और जिनेश्वर भगवान्को, गुरुमहाराज को वंदन करनेको जाना इत्यादि धर्म क्रिया करनेमें कभी उपयोग न रहे तो यह धर्मकार्य करने छोड देने चाहिये। और जिस तरह श्रीआदीश्वर भगवान्के समय 'मरीचि' ने अपनेसे शुद्ध संयम धर्मका पालन करना नहीं बनसका तब साधुका वेष छोडकर नया वेष बनाया. उसी तरह यदि ढूंढिये साधुओं से भी विवेक पूर्वक उपयोग सहित शुद्ध संयम धर्मका पालन करना नहीं बन सकता हो तो कपट छोडकर साफ २ सत्य २ कथन करें, शुद्ध साधु न कहलावें, मूलसूत्र, प्राचीन शास्त्रादिके नामसे हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका न ठहरावें, 'जिनवरने मुंहपत्ति बांधने का फरमायाहै' ऐसी २ झूठी २ बातें बनाकर तीर्थंकर परमात्माके ऊपर झूठा आरोप न लगावें, जैन साधु कहलाना छोडदें और नाक पर भी हमेशा वस्त्र बंधारक्खे तथा दोनों पैरोंके दो पूंजनी बांधकर 'मरीचि' की तरह एक नया अजब वेष बना कर पूरे २ दयालु बननेका जगत्को दिखलादें तबतो मुंहकी यत्ना करनेका उपयोग न रहने से मुंह बांधनेका ढूंढियोंका कथन सत्य समझा जावे नहींतो भोले जीवों को बहकाने के लिये उपयोग न रहने के नामसे सर्वज्ञ शासनमें माया प्रपंच रचनेका कलयुगी झूठा ढोंगही समझना चाहिये।

(ढूंढियों की विचित्र लीला का नमूना देखो)

३२. ढूंढिये एक जगह लिखतेहैं कि भगवान्ने भगवती आदि आगमोंमें हमेशा मुंहपत्ति बांधना कहाहै। दूसरी जगह लिखतेहैं भगवान्ने आगमोंमें बांधना नहीं कहा परंतु संवेगियोंके आचार दिनकर, ओघनि-

युक्ति आदि प्राचीन शास्त्रोंमें लिखाहै। तीसरी जगह लिखतेहैं प्राचीन शास्त्रोंमें हमेशा बांधना नहीं लिखा किंतु भुवनभानु केवलि आदिके रासोंमें लिखाहै। चौथी जगह लिखतेहैं जैन शास्त्रोंमें नहीं लिखा परंतु अन्य दर्शनियोंके शिवपुराणादि में तो लिखाहै। पांचवीं जगह लिखतेहैं सोमिल तापसने अपने मुंहपर काष्टकी पटडी बांधीथी उसीतरह हमभी हमेशा मुंहपत्ति बांधतेहैं। छठी जगह लिखतेहैं पैरोंका भूषण पैरोंमें शोभे, वैसेही हमारे मुंहपर बांधीहुई मुंहपत्ति शोभतीहै। सातवीं जगह लिखतेहैं किसी शास्त्रमें हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेका स्पष्ट लेख नहींहै परंतु मुंहपत्ति शब्दसे मुंहपर बांधना मानतेहैं। आठवीं जगह लिखतेहैं बोलते समय मुंहपत्तिके थूंक लगताहै मुंहपत्ति गीली होतीहै परंतु संमूर्च्छिम जीवों की उत्पत्ति हानि नहीं होती, थूक अशुचि पदार्थ नहींहै। नवमी जगह लिखते हैं नाकके श्वासोश्वाससे किसी जीवकी हानि नहीं होती इसलिये हम नाक खुली रखतेहैं। दशवीं जगह लिखतेहैं वायुकाय के जीवोंकी दया पालन करनेके लिये मुंहपत्ति बांधी रखतेहैं। ग्यारहवीं जगह लिखते हैं विष्टाआदि अशुद्ध जगह की मक्खी अपने मुंहपर बैठने न पावे इस लिये मुंहपत्ति बांधी रखतेहैं। बारहवीं जगह लिखतेहैं जगतमें अच्छी २ वस्तु ढकी जाती हैं वैसेही हमारा अच्छा मुंह हमेशा ढका रहताहै। तेरहवीं जगह लिखतेहैं जैसे साध्वीके साडा दोरेसे बांधा जाताहै, वैसे ही हमारी मुंहपत्ति भी दोरेसे बांधनेमें आतीहै। चौदहवीं जगह लिखतेहैं मुंहपत्ति बांधने वाले तीसरे भवमें सब कर्मों से छुटकर मोक्ष जाते हैं। पंदरहवीं जगह लिखतेहैं मूलसूत्रोंमें हमेशा मुंहपत्ति बांधना नहीं लिखा परंतु बोलते समय हमारेसे बारबार उपयोग नहीं रहता इसलिये प्रमाद के कारण बांधी रखतेहैं। इत्यादि तरह २ की पूर्वापर विरोधी मनमानी झूंठी २ बातें लिखकर भोले लोगोंको बहकातेहैं और कुयुक्तियोंसे सर्वज्ञ शासनमें हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेरूप मिथ्यात्व फैलाते हैं. जिसमें कितनीक बातोंका थोडासा दिग्दर्शन मात्र समाधान इस "जाहिरउद्घोषणा" के ऊपर के लेखों में बतलाया है और अन्य सब शंकाओंका व मुंहपत्ति संबंधी ढूंढियोंकी तरफसे आजतक छपी हुई सब पुस्तकों के लेखोंका विस्तारपूर्वक निर्णय आगमादि शास्त्र पाठों के साथ "आगमानुसार मुंहपत्तिका निर्णय" नामा ग्रंथमें लिखाहै, सबसंघको बिनादाम भेट मिलताहै, पाठक गण मंगवाकर पूरा २ पढ कर सत्य ग्रहण करें।

॥ ॐ श्री जिनाय नमः ॥

जाहिर उद्घोषणा. नम्बर २.

(झूंठको छोडो और सत्यको ग्रहण करो)

॥ इसको भी पूरा २ अवश्य ही पढिये ॥

(हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेमें ३६ दोषोंकी प्राप्ति)

३३. देखिये अपनेसे किसी कार्यमें पूरा २ उपयोग न रहे कुछ भूल होजावे, दोषलगे तो पश्चाताप करके प्रायश्चित्त लेनेसे शुद्धहोतेहैं इसीलिये प्रतिक्रमणादि क्रियाएँ शास्त्रोंमें बतलायीहैं । परंतु अपनी प्रमाद दशाकी थोडीसी भूलको आगे करके अनादि सच्ची मर्यादाका उत्थापन करनेसे बडा अनर्थ होताहै । इसी तरहसे ढूंढियोंने उपयोग न रहनेसे मुंहपत्ति बांधी रखनेका नया रिवाज चलाया किंतु अब इस बातमें अनेक दोषोंका सेवन करना पड़ताहै, सो नीचे बतलातेहैं:—

१. अनादि कालके सर्व साधुओंको हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखने का झूंठा दोष लगाते हैं ।

२. आगमादि शास्त्रोंके नामसे प्रत्यक्ष झूंठ बोलकर हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेका ठहरातेहैं ।

३. भगवती सूत्रमें तथा ज्ञाताजी सूत्रमें हजामत करनेवाले गृहस्थ नाइयोंने राजकुमारोंके केश काटनेके लिये थोड़ी देर नाक मुंह बांधेथे ऐसा अधिकार है, उस बातको आगे करके ढूंढिये साधुपनेमें हमेशा मुंह बांधनेका ठहराने वाले अपनी हंसी करवातेहैं ।

४. निरयावली सूत्रमें अन्यलिंगी सोमिल तापसने मिथ्यात्व दशा में अपने मुंहपर काष्टमुद्रा बांधीथी, उसी प्रमाणको आगेकरके ढूंढिये भी अपना मुंह हमेशा बांधा रखकर प्रकटपने अन्यलिंगी मिथ्यात्वी बनते हैं ।

५. थूंककी गीली मुंहपत्ति चौमासेमें सुखाने परभी १-२ रोज तक नहीं सूखती, उसमें समय २ असंख्य संमुर्च्छिम पंचेंद्रीय मनुष्यों की उत्पत्ति और हानि होनेका पाप बांधतेहैं ।

६. वर्षा चौमासेमें थूंककी गीली मुंहपत्ति रात्रिमें मुंहपरसे अलग रखतेहैं, उसमें नीलण-फुलणकी उत्पत्ति होनेसे अनंत जीवोंकी हिंसाका दोष लगता है।

७. थूंककी गीली मुंहपत्तिको हर समय मुंहपर बांधी रखनेसे मुंह झूंठा रहताहै, झूंठे मुंहसे सूत्र पढतेहैं, व्याख्यान बांचतेहैं यहभी ज्ञानावर्णीय कर्म बंध का हेतुहै।

८. बादीवालेको व्याख्यान बांचते समय मुहमेंसे बहुत थूंक उडताहै, इसलिये मुंहपत्तिके अंदर कपड़ेका दूसरा टुकड़ा (छोटी मुंहपत्ति) रखनेकी विटंबना करनी पड़तीहै।

९ मौन रहने परभी हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेसे बाल चेष्टा जैसी निष्फल क्रिया होनेका दोष लगताहै।

१०. मुंहपर मुंहपत्ति बांधी रखनेसे नाक कान आंख ललाट मस्तक वगैरह छोटे २ स्थानोंपर कोई सूक्ष्मजीव या सचित्त रजादि गिरजावे तो मुंहपत्तिसे उसकी प्रमार्जना नहीं होसकती तथा छींक करते समय और दुर्गंधिकी जगह मुंहपत्तिसे नाककी यत्ना भी नहीं होसकती यह अधूरी क्रियाका दोष लगताहै।

११. ढूंढिये साधु दवाई लेनेके समय या थूंकनेके समय मुंहपत्तिको बार बार उंची नीची करके नाटकके परदेकी तरह मुंहपत्तिकी बड़ी विटंबना करतेहैं।

१२. होठोंके उपर हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेसे बोलते समय, छींक-उबासी-डकार-खांसी करते समय मुंहके श्वासोश्वास द्वारा पेटमेंसे दुर्गंधयुक्त अशुद्ध पुद्गल बाहिर निकलतेहैं, वह सब मुंहपत्तिके चिपकजातेहैं और पीछेही पेटमें जातेहैं, जिससे पेटमें रोगकी उत्पत्ति होतीहै तथा मुंहमें दुर्गंध होतीहै इसलिये अनुभवी वैद्य और डाक्टर लोग हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेमें अनेक नुकसान बतलातेहैं।

१३. विपाक सूत्रमें तथा ओघनिर्युक्ति आदि शास्त्रोंमें कभी दुर्गंधिकी जगह पर या उपाश्रयकी प्रमार्जना करनेके समय मुंहपत्तिको नाक-मुंह दोनोंके उपर थोडीदेर बांधनेका कहाहै, जिसपरभी ढूंढिये नाकपर नहीं बांधते यहभी सूत्रकी आज्ञा लोपन करनेका दोष लगताहै।

१४. एकवेंत चारअंगुल (१६ अंगुल) समचौरस या अपने २ मुंह प्रमाणे समचौरस मुंहपत्ति रखनेकी मर्यादाहै परंतु ढूंढिये एक कपडेकी लंबी चीरी लेकर लपेट कर बांधतेहैं यहभी शास्त्र विरुद्धहै।

१५. "मुहणंतगेण" पाठका मुख स्त्रिका अर्थहै, जिसपरभी मुंहपत्तिमें दोरा डालनेका झूंठा अर्थ करतेहैं यहभी उत्सूत्र प्ररूपणाका दोष लगताहै।

१६. धूपके दिनोंमें पसीनासे मुंहपत्तिके उपर मैलके दाग पड जातेहैं, कभी २ दिनभरम नयी नयी २-३ मुंहपत्ति बदलनी पडतीहैं नहींतो बास आने लगताहै।

१७. कभी छींक करते समय या श्लेषमके समय नाकका मैल मुंहपत्तिके उपर लग जाताहै तो बहुत बुरा लगताहै, यहभी विटंबनाहीहै।

१८. होठोंके उपर मुंहपत्ति बांधी रहनेसे जोरसे बोलने परभी बहुत साधुओंकी आवाज रुक जातीहै, मुंगेके जैसा स्वर भंग हो जाताहै, जिससे धर्मका उपदेश सुनने वालोंको साफ २ समझमें नहीं आताहै।

१९. बेरुपियोंकी तरह मुंहका रूप बिगडताहै इसलिये अन्य दर्शनीय लोग मुंहबंधे मुंहबंधे कहकर जैन साधुकी हंसी करतेहैं, जिससे जगत् मान्य सर्वज्ञ शासनकी अवज्ञा होताहै, उससे उन लोगोंके कर्म बंधन होतेहैं और हमेशा मुंह बांधकर शासनकी अवज्ञा करवाने वाले दुर्लभ बोधी होतेहैं।

२०. दशवैकालिकमें 'जयं भुंजंतो भासंतो' इसपाठमें मुंहकीयत्ना करके बोलनेका कहाहै, सो हाथ में मुंहपत्ति रखकर मुंहकी यत्ना करके बोलने वालोंको जब १-२ घंटे तक बोलनेका कामपडे तब हाथको बडा कष्ट होताहै, उससे उपयोगभी विशेष शुद्ध रहताहै परंतु हमेशा बांधी रखने वालो को मुंहकी यत्ना करनेकी जरूरत नहीं रहती, जिससे हाथके कुछभी कष्ट नहींहोता, उपयोगभी शुद्ध नहीं रहताहै इसलिय दशवैकालिक सूत्रकी आज्ञा उत्थापन होतीहै तथा उपयोग शुन्य बोलनेका दोष आताहै।

२१. शास्त्रोंमें त्रस और स्थावर दोनों प्रकारक जीवोंकी रक्षा करनेके लिये मुंहपत्ति रखनेका कहाहै ताभी ढूंढिये एक वायुकायकी रक्षा करनेकेलिये मुंहपत्ति रखनेका कहतेहैं सोभी शास्त्र विरुद्ध बोलतेहै।

२२. मुंहपत्तिसे नाक और मुंह दोनोंकी यत्नाकरनेका सूत्रोंमें कहाहै, तोभी ढूंढिये मुंहपत्तिसे नाककी यत्ना नहीं करनेका कहतेहैं और नाकके श्वासोश्वाससे जीवोंकी हानि नहीं होती, ऐसा कहतेहैं यहभी सूत्र विरुद्ध होकर प्रत्यक्ष झूंठ बोलतेहैं।

२३. बीमार साधुको और संथारा किये हुये साधु-श्रावकको

अंतसमयतक मुंहपत्ति बांधीहुई रखवातेहैं यहभी हठाग्रहकी बडीभूलहै।

२४. कई २ ढूंढिये श्रावक कभी मस्तकपर पगडी तथा अंगपर अंगरखी और पायजामा पहीने हुएभी अपने मुंहपर मुंहपत्ति बांधकर आनुपूर्वी या नवकरवाली (माला) फैरने बैठ जातेहैं, यहभी सर्वज्ञ शासन में नाटक जैसा सांगहै।

२५. पढे लिखे समझदार नवयुवकोंकी व प्रतिष्ठितलोगोंकी मुंहपत्ति बांधनेकी श्रद्धा नहींहै और बांधनेमेंभी बे शर्मी समझतेहैं, इसलिये सामायिक आदि करते समय केवल मतपक्षकी शर्मसे हाथमें मुंहपत्ति रखकर मुंहकी यत्ना नहीं करते और धोती दुपट्टेको अपने मुंहपर लपेट लेतेहैं यहभी ढोंगहै।

२६. जैन शासनमें आनंद-कामदेवादि अनेक श्रावक होगये हैं, परंतु ढूंढियोंकी तरह किसीभी श्रावकने अपने मुंहपर मुंहपत्ति कभी नहीं बांधी, तिसपरभी इन लोगोंने बिचारे भोले लोगोंको मुंहपत्ति बंधवाकर जिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा उत्थापन करनेवाले बनायेहैं।

२७. मारवाड आदि देशोंमें ढूंढक, तेरहापंथी श्राविकाओंकी मुंहपत्तिके उपर गोटा या मोती वगैरह जौहरात लगा हुआ रहताहै, यह भी बडी भूल है।

२८. बाईस टोलेवाले सब ढूंढियोंकी और तेरहपंथियोंकी मुंहपत्तिमें लंबाई चौडाई छोटी मोटी वगैरह तरह २ की विचित्र प्रकारकी भिन्नताहै, परंतु एक प्रमाण नहींहै, यहभी प्रत्यक्ष शास्त्र विरुद्धहै।

२९. सूत्रोंमें शुद्ध ज्ञान क्रियासे मुक्तिहोना बतलायाहै परंतु वेषलेने मात्रसे मुक्तिहोना नहीं बतलाया तोभी ढूंढिये भोले जीवोंको बहकानेके लिये मुंहपत्ति बांधनेसे तीसरे भवमें मुक्तिहोनेका बतलाते हैं यहभी उत्सूत्र प्ररूपणाहै।

३०. जगतमें यह बात प्रसिद्धहै कि चौर डाकू निंदक वगैरह अपने मुंह छुपाते हुए फिरतेहैं। इसी तरह ढूंढियेभी जिनप्रतिमाकी तथा पूर्वाचार्योंकी झूठी २ निंदा करने वाले और सूत्रोंके पाठोंको व अर्थोंको चौरने वालेहैं (इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण चैत्य-जिनप्रतिमा संबंधी आगेके लेखमें बतलानेमें आवेगा) इसलिये इनोंकी मुंह बंधकर मुंह छुपानेकी दुर बुद्धि हुईहै।

३१. निशीथसूत्रमें साधुको अपने मुखकी शोभाकेलिये दांतोंको

और होठोंको साफ करना, रंग लगाना या बडेहोठको कटवाकर सुधराना इत्यादि कार्यकरने वालेको दोष बतलायाहै, यह बात खुला मुंह हो तब शोभाके लिये की जातीहै, परंतु बांधा हुआ हो तो नहीं, यदि खुला मुंह हो तो लोकलज्जासेभी साधु होठोंको रंगना वगैरह दोष न लगा सके परंतु बंधाहुआ होतो गुप्तदोष लगा सकताहै, इसलिये हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेसे निशीथसूत्रकी आज्ञा उत्थापन होतीहै और दांत होठ रंगने वगैरह का गुप्तदोष लगानेकी मायाचारी भी कर सकताहै ।

३२. भाषा बोलनेके लिये पुद्गल ग्रहण करने तथा भाषा बोलनी और आगे बोलनेमें आवे, यह सब भाषावर्गणा कही जातीहै, "पन्नवणा" सूत्रमें इस भाषा वर्गणामें नियमा शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष यह चार स्पर्श बतलायेहैं, परंतु भाषा बोलेबाद गुरु (भारी) वगैरह आठस्पर्श होनेका नहीं बतलाया, जिसपरभी ढूंढियेलोग " पन्नवणा " सूत्रके नामसे भाषा वर्गणामें आठस्पर्श होनेका कहकर वायुकायके जीवोंकी हानि करनेका ठहरातेह, यहभी सर्वथा सूत्र विरुद्धहै ।

३३. उववाई, भगवती, ज्ञाताजी आदिसूत्रोंमे श्रावकोंको दुपट्टेका उत्तरासन रखनेका जगह २ अधिकार आयाहै, यह उत्तरासन ब्राह्मणोंकी जनोईकी तरह रखा जाताहै, कभी काम पडे तब उसका छेडा मुंहके आगे रख सकतेहैं, उससे नाक मुंह दोनोंकी यत्ना होतीहै यह बात प्रत्यक्ष अनुभवसे सिद्ध है, जिसपरभी ढूंढियेलोग उत्तरासनका अर्थ मुखकोशकी तरह मुंह बांधना करतेहैं, यहभी सूत्र विरुद्ध होनेसे उत्सूत्र प्ररूपणाहीहै ।

३४. जब डाक्टर लोग चीराफाडीका काम करतेहैं तब दुर्गंधिका और राज्य युद्धमें जहरी धुंआका बचाव करनेके लिये नाक-मुंह दोनों ढक लेतेहैं तथा विवाह शादी, राजदरबार, जाहिर सभा वगैरहमें कई लोग अपने मुंहके आगे उत्तरासनका छेडा या रुमाल आदि रखतेहैं, यह श्रेष्ट व्यवहारहै, परंतु इन बातोंसे नाक खुला रखकर अकेला मुंह बांधा रखनेका साबित नहीं होसकता, जिसपरभी ढूंढियेलोग भोलेजीवोंको उपरकी बातें बतलाकर हमेशा मुंह बांधनेका ठहरातेहैं, यहभी प्रत्यक्ष झूठा मायाचारीका प्रपंचहै ।

३५. जिनेश्वर भगवान् ने मुंहके आगे वस्त्रादि रखकर उपयोगसे बोलने वाले की भाषा को निर्दोष कहाहै और ढूंढिये इस बात के

विरुद्ध होकर मुंहपति बांध कर बोलने वाले की भाषा को निर्दोष कहते है, इसलिये जिन आज्ञा के उत्थापन करने वाले बनते हैं। एक जिनराज की आज्ञा उत्थापन करने वालों को अतित, अनागत और वर्तमान काल के अनंत तीर्थंकर महाराजों की आज्ञा उत्थापन करने का दोष आता है, उससे अनंत संसार बढता है।

३६. ऊपर मुजब जिनाज्ञा विरुद्ध होकर हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखकर फिरनेसे जैनलिंग बदल जाता है, जैनलिंग बदल जानेसे, द्रव्य मुनिधर्म चला जाता है, द्रव्य मुनिधर्म जानेसे, अन्यलिंग हुआ, अन्य लिंगको जैनलिंग कहनेसे, श्रद्धारखनेसे और गुरु माननेसे, सम्यग् दर्शन जाताहै, सम्यग् दर्शन जानेसे सम्यग् ज्ञान जाता है, सम्यग् ज्ञान जानसे सम्यग् चारित्र जाता है, इस तरहसे खास मोक्षके हेतु सम्यग् दर्शन, ज्ञान, चारित्रके जानेसे मिथ्यात्व आताहै, मिथ्यात्व आनेसे द्रव्य और भाव दोनों प्रकारका साधुका धर्म चला गया, द्रव्य-भावसे साधुका धर्म जानेपरभी शुद्ध साधु कहलानेसे झूठा ढोंगहुआ, झूठे ढोंग में जैन शासनके नामसे भोलेलोगोंको फँसानेसे सच्चेमोक्ष मार्ग का उत्थापन हुआ, सच्चे मोक्षमार्गका उत्थापन होनेसे संसार भ्रमणका फल हुआ, संसार भ्रमण करनेसे ८४ लक्ष जीवायोनिकी घात हानेका दोष आया, इस प्रकार हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहराने में जिनाज्ञाकी उत्थापना, मिथ्यात्वकी प्राप्ति और संसार भ्रमणादि अनेक दोषोंका सेवन करना पडता है परंतु तत्त्व द्रष्टिसे कुछभी लाभनहीं है, जिसपरभी ढूंढिये लोग 'जिनवर फुरमाया, मुंहपत्ति बांधो मुख उपरे' ऐसी २ जिनराजके नामसे रागबनाकर हजारों पुस्तकें छपवाकर बडे २ शास्त्रोंके नामसे झूठी धोखा बाजी करके हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहराकर आप डूबतेहैं और अपने भक्तोंकोभी डूबाते हैं (इसका पूरा २ विशेष निर्णय मूल ग्रंथमें देखो) इस प्रकार हमेशा मुंहपत्ति बांधना अनर्थका मूल होनेसे इस ग्रंथको पढे बाद ढूंढिये व तेरहापंथी साधु-साध्वी-श्रावक और श्राविका अबतो कोइ भी सम्क्त्वा इसबातका आग्रह कभी न करेंगे, इतनेरोज अंधरूढिसे बांधी या बांधनेकी पुष्टिकी उसका प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध होकर बांधने का त्याग करके सत्य बात अवश्य ग्रहण करेंगे, यही परम हितकारी है।

(वायुकायकी दया पालन करनेके लिये मुंहपत्ति बांधने वालोंको तथा दया २ का नाम रटने वालोंको नीचे लिखे प्रमाणे हिंसाके कार्य त्याग करने योग्यहैं)

१. ढूंढिये साधु लंबा ओघा रखते हैं, जिससे चलते समय नीचे लटकता रहता है, उससे समय २ वायुकाय के असंख्य जीवोंकी हानि होती है अतएव लंबा ओघा छोडकर संवेगी साधुओंकी तरह शास्त्र प्रमाणके अनुसार ३२ अंगुल प्रमाणे और चद्दरके अंदरढका हुआ रहसके वैसा छोटा ओघा रखना योग्य है।

२. ढूंढिये ओढनेकी चद्दरको गांठ बांधते है जिससे चलते समय सामनेकी हवा आनेसे नावके पालकी तरह चद्दरमें हवा भर जाती है उससे पीठके पीछे ढोलकी तरह चद्दर उंची होजाती है, उसमें भी वायुकायके जीवोंकी हानि होती है अतएव गमारोंकी तरह चद्दरके गाती बांधना छोडकर संवेगीसाधुओंकी तरह खुली चद्दर ओढना योग्य है।

३. ढूंढिये साधु उपरसे मुंहपत्ति बांध लेतेहैं परंतु नीचे से खुली रखते है, जिससे हिलती रहती है, उसमें भी समय २ वायुकायकी हिंसा होती है अतएव यदि पूरी २ दया पालन करना होतो मुंहपत्तिको नीचेसे भी बांध लेना चाहिये या ऊपर मुजब अनेक दोष समझकर हमेशा बांधनेका त्याग करना योग्य है।

४. ढूंढिये साधुओंको बाजारमें व्याख्यान बांचनके लिये प्रत्येक गांव २ में कहीं २ तंबु सामीयाने खडे किये जाते हैं, पाल वगैरह बांधे जाते हैं तथा चौमासेमें टीनकी चद्दरें डलवाकर छायाकी बैठक की जाती है और तपस्या के पुरके उत्सवपर खास मंडप बनवाकर ध्वजा पताकायें लगवाई जाती हैं, उसमें स्थंभ व खीली गाडने वगैरहमें पृथ्वी कायकी, पाल, सामीयाना, ध्वजा, पताका आदिसे वायुकायकी और चौमासेमें अपकाय, नीलण फुलण आदि छ कायके अनंत जीवोंकी हिंसा होती है, यहभी त्याग करना योग्य है। यदि ढूंढिये साधु अपने भक्तोंको ऐसे हिंसाके कार्य करनेकी व आप उसमें जाकर बैठने की मनाई कर दें तो इस हिंसाका बचाव सहजमें हो सकता है।

५. ढूंढिये साधु अपनी शोभाके लिये भक्तोंकी मारफत चौमासी पत्रिका, क्षामणा पत्रिका, तपस्या के पुरकी पत्रिका छपवानेमें और गांव

गांव में भिजवाने में अनंत हिंसा करवाते हैं, (क्षामणा पत्रिका का रिवाज सब जैनियोंमें चलताहै यह अनर्थ दंडका हेतु सुधरानेकी खास आवश्यकता है) यह भी त्याग करने योग्य है।

६. वर्षा चौमासे में साधु को विहार करने की मनाई है, विवेक वान् धर्मी श्रावकभी अपना गांव छोडकर दूसरे गांव नहीं जाते, तिस-परभी ढूंढिये साधु सिर्फ अपनी महिमा बढाने के लिये वंदनाके नामसे और तपस्याके पूरके नामसे पत्र लिखवाकर या पत्रिका छपवाकर हजारों लोगों को बुलवाते हैं, आनेवाले लोग गाडी, घोडे आदिकी सवारी से या पैदल आतेहैं, उसमें त्रस स्थावर अनंत जीवों की यावत् मेंडक आदि पंचेंद्रीय जीवोंकी हिंसा होती है, रेलवे की महान् क्रिया लगती है, अवा-वर मकानोंमें ठहरने से झाडु, दीपक, स्नानादिमें व भट्टी खाने में तथा आटा, दाल, चावल, शकर, मसाले वगैरह जीवाकुल सामान बाजारसे लाकर रसोई बनवाने में और भोजन स्थान में अपार हिंसा होती है, अतएव ऐसी हिंसा के कार्य त्याग करनेयोग्यहैं। यदि ढूंढिये साधु अपनी नामवरी की झूंठी शोभाका मोह छोड दें, शांतिसे आत्म कल्याणके लिये तपकरें, जिसगांवमें ठहरें हो उसगांव में अमारी घोषणा आदि जीवदया के कार्य करावें और अपने भक्तोंको ऐसे अनर्थ मूल हिंसा के कार्य करने की मनाई कर दें, तो ऐसी महान् हिंसा का बचाव हो सकता है। पूरी २ दयाभी पल सकती है, नहीं तो ऐसी महान् हिंसाके पापके आगे तप और संयम दोनों धूल में मिलते हैं। और अमुक साधु के चौमासे में ५० मण खांड गली, चार महीना रसोडा चालु रहा, इतने हजार आदमी दर्शना-र्थ आये, तपके पूरमें और पूज्य पदवीमें इतने मण खांड लगी, ऐसे २ हिंसा के पापकर्मकी अनुमोदना करके भोले जीव पापके भागी होते हैं। ढूंढिये श्रावकों के प्रायः करके प्रत्येक वर्षमें इस कार्यमें दो ढाई लक्ष और तेरहापंथि-योंके लक्ष, सवालक्ष द्रव्यका विनाश होता है, इसमें जिनाज्ञा की विराधना, अनंत जीवों की हानि तथा द्रव्यका नाश और संसार बढने का फल मिलता है, अतएव यदि इतना द्रव्य निराश्रित जैनों के बाल बच्चे, विधवा-एँ तथा अशक्त वृद्धोंके लिये उपयोग में लगे तो बडा लाभ मिले।

७. ढूंढिये साधु जब विहार करते हैं, तब भक्तों की मारफत गांव में सूचना पहुंच जाती है तथा आग के गांवमें भी अमुक समय आवेंगे ऐसी सूचना भिजवा देते हैं, उससे अनेक लोग पहुंचाने को व सामने

लेने को आते हैं, उसमें त्रस और स्थावर अनेक जीवोंकी हानि होती है; इस रिवाज का त्याग करके वायुकायकी दया पालने के लिये मुंहपत्ति बाधने वालों को किसी तरह की सूचना करवाये बिनाही विहार करके दूसरे गांव जाना योग्य है।

---

८. मगध, बंगाल वगैरह देशों में चावल, अंबाडी, आंब, तिल, यव इत्यादि वस्तु धोनेका प्रायः प्रत्येक घरमें प्रसिद्ध देशाचारहै, इसलिये सूत्रोंमें ऐसे निर्दोष धोवण साधुको लेनेकी आज्ञाहै, वहभी कितनी देरका बना हुआहै इत्यादि पूछकर, वर्ण-रस-गंधकी परीक्षा करके वा थोडासा हाथमें लेकर चाखकर पूरा निर्णय करके पीछे लेनेका कहाहै पूर्वधरादि दिव्यज्ञानी पूर्वाचार्योंने ऐसे धोवणको अचित्त हुए बाद अनुमान १ प्रहरका काल बतलायाहै, बाद जीवोंकी उत्पत्ति होतीहै इसलिये उतने समयके अंदरमें वापरकर खलास करदेना चाहिये, बहुत देरका लेनेकी या ज्यादे रखनेकी मनाईहै। ढूंढियोंको इस बातका पूरा ज्ञान नहींहै और गृहस्थोंके वासी पिंडा धोनेका या हांडे, कुंडे, लोटे, गलास आदि रात्रि-वासी झूंठे वर्तनोंको मांजनेका मैला पाणीको धोवण समझ कर लेतेहैं, यह प्रायः सचित्त जल होताहै कभी ज्यादे राखोडीके कारण अचित्त होजावे तोभी दो घडी बाद पीछा सचित्त होजाताहै, उसमें अनंतकाय और फुँआरे आदि त्रसजीवोंकी उत्पत्ति होतीहै ऐसे जल ढूंढिये साधु लेकर शामतक रखतेहैं, पीतेहैं, उसमें कभी फुँआरे देखनेमें आतेहैं, तब नदी, तलाव, कूए आदिके पासमें गीली जगहमें जाकर फैकतेहैं, उससे परकाय शस्त्र होकर उन फुँआरोंके तथा गीली जगहके दोनों प्रकारके जीवोंका नाश होताहै, किसी समय अन्य दर्शनी लोग देख लेतेहैं तब बडी निंदा होतीहै, कर्म बंधनका व जैनशासनके उडाह होनेका हेतु बनताहै. ऐसे कारण मारवाड आदिमें बहुतवार बन चुकेहैं। और कोई २ ढूंढिये कभी २ कुम्हार आदिके घरका मट्टी गोबर का मैला पाणी लेतेहैं, उससेभी शासनकी हिलना (अवज्ञा) होतीहै यह सब बातें सूत्र विरुद्धहैं, द्रव्य और भाव दोनों प्रकारकी हिंसाके हेतुहैं इसलिये ऐसे जल लेनेका त्याग करना योग्यहै।

९. भगवती सूत्रमें साधुको आहार पाणी तीन प्रहर तक रखने की आज्ञा दी है सो गरम जल, त्रिफलाका जल, वा छाछकी आस, काजी आदि जल की कारण वश उत्कृष्ट काल मर्यादा बतलायी है परंतु

पणीयारेके मटकोंका या वासी और झूंठे लोटे, गलास आदि धोनेका जल तीन प्रहर तक रखनेकी आज्ञा नहींहै लोटे व गलासका धोवण पूरा अचित्त नहीं होता, फुँआरे आदि उत्पन्न होतेहैं और गृहस्थोंके पणीयारे के मटकोंके अदरमें व उपरमें नीचे सूक्ष्म मट्टी लगी रहतीहै उसमें अनंत काय उत्पन्न होतीहै, उसका धोवण अनंतकायकी उत्पत्ति व हानि का हेतु होनेसे साधुको लेना तो दूर रहा परंतु संघट्टा करना भी कल्पता नहींहै जिस परभी भगवती सूत्रके नामसे ऐसा जीवाकुल सचित्त धोवणको लेनेका व तीन प्रहर तक रखनेका ठहराने वाले जिनाज्ञाकी विराधना करतेहैं। तथा ढूंढिये गृहस्थ लोगभी ऐसा धोवण चार प्रहर तक रखकर पीते हैं यहभी त्रस व स्थावर अनंत जीवोंकी हिंसाका हेतु होनेसे सर्वथा सूत्र विरुद्धहै।

१०. कई ढूंढिये धोवणमें जीव उत्पत्ति की शंका मिटानेके लिये दुरबीन से या जाडाकाँचसे धोवणमें जीव देखतेहैं परंतु देखनेमें नहीं आते उससे निर्दोष समझ लेतेहैं, यहभी अनसमझहै क्योंकि अंगुल के असंख्य भाग छोटे शरीर वाले व निगोदीये जीव ज्ञानी के सिवाय किसी भी साधन से चर्म चक्षुवाले मनुष्य कभी नहीं देख सकते और कभी फुँआरे आदि बडे त्रस जीव प्रत्यक्ष भी देखनेमें आतेहैं इसलिये झूंठे वर्तनोंका व पिंडेका धोवण को निर्दोष अचित्त समझ ने वालों की बडी भूल है।

११. गृहस्थ लोग शामको चुल्हे पर कच्चा जल रख देतेहैं, वह पूरा २ गरम होकर अचित्त नहीं होता, कदाचित् चुल्हेकी गरमीसे कुछ मिश्र होजावे तोभी रात्रिमें पीछा सचित्त होजाताहै, ढूंढिये साधु फजरमें उस जलको गरम जल समझकर लेतेहैं, यहभी कच्चे सचित्त जल लेनेका दोष लगताहै इसलिये ऐसा जल लेना योग्य नहीं है।

---

१२. हलवाई लोग जलेबी बनातेहैं, उसका मेदा पहिले रोज भींगोकर रखदेतेहैं, उसमें रात्रिको दो इन्द्रीय असंख्य जीवोंकी उत्पत्ति होतीहै, स्वाद बदल जाताहै, बास आने लगतीहै, जब ख़मीर उठताहै तब फजरमें जलेबी बनातेहैं, यह प्रत्यक्ष प्रमाणहै जिससे संवेगी साधु जलेबीको अकल्पनीय समझ कर नहीं लेते, विवेक वाले धर्मी श्रावक भी नहीं खाते. ढूंढियों को इस बात का भी ज्ञान नहीं है, अतएव जलेबी

लेतेहैं और खातेहैं यहभी त्याग करने योग्यहै।

१३. आषाढ चौमासेसे कार्त्तिक चौमासे तक हरिपत्तिके शाक वगैरह में तीन इन्द्री वाले छोटे २ कुंथुये आदि त्रस जीवोंकी उत्पत्ति होतीहै, जिससे शास्त्रकारोंने चौमासेमें श्रावकोंकोभी हरिपत्ति खानेका त्याग करनेका बतलायाहै, इसलिये संवेगी साधु हरिपत्तिके शाक, चटनी आदि नहीं लेते। ढूंढियोंको इस बातकाभी ज्ञान नहींहै, ढूंढिये श्रावक हरिपत्तिके शाक आदि बनातेहैं और उनके साधु लेतेहैं यहभी असंख्य त्रस जीवोंकी हिंसाका हेतु होनेसे त्याग करना योग्यहै।

१४. बहुत रोजका आचार, मुरब्बा आदिमें उसी वर्णवाली अनंतकाय निगोद (फुलण) उत्पन्न होतीहै. प्रत्यक्ष स्वाद बदल जाता है, बास आतीहै, उससे सुक्ष्म त्रस जीवोंकीभी उत्पत्ति होतीहै। ढूंढियों को इस बातका भी ज्ञान नहीं है, जिससे ढूंढिये साधु ऐसे आचार, मुरब्बे आदि लेते हैं यहभी त्याग करने योग्य है।

१५. वासी शीरा, लापसी, खीचडी, चावल, रोटी वगैरहमेंभी त्रस जीवोंकी उत्पत्ति होतीहै, जैसे अग्निमें उष्ण कायके व बरफमें शीत कायके जीवोंकी उत्पत्ति होतीहै, वैसेही ओसर मोसर आदिके जीमण में पहिले रोज रात्रिको बनाये हुए सीरा लापसी आदि यदि दूसरे दिन फजर तक गरम २ रहें तोभी उसमें उष्ण कायके जीव उत्पन्न होतेहैं तथा शरदीमें रोटी आदि बहुत ठंढे रहतेहैं तोभी उसमें शीत काय के जीव उत्पन्न होतेहैं और कभी २ रोटी खीचडी आदि में तार बंध जाते हैं, स्वाद फिर जाताहै, यह प्रत्यक्ष प्रमाणहै, संवेगी साधु ऐसी वस्तु कभी नहीं लेते। ढूंढियोंको इस बातका भी ज्ञान नहींहै, इसलिये जीमण वारके तथा शीतला पूजनके व गृहस्थोंके घरमें शामको बचे हुए शीरा, लापसी, बडे, गुलगुले, मालपुवे, नरमपुडी, रोटी, खीचडी आदि वासी आहार लेकर खातेहैं यहभी असंख्य त्रस जीवोंकी हिंसाका हेतु होनेसे त्याग करने योग्यहै।

१६. कई ढूंढिये कहतेहैं कि आचारांग सूत्रमें महावीरस्वामी भगवान्ने वासी ठंढा आहार लियाथा, इसीतरह हमकोभी ठंढा आहार लेनेमें कोई दोषनहींहै, ऐसा कहकर वासी रोटी खीचडी आदि खाने का ठहरातेहैं, यहभी अनसमझकी बातहै क्योंकि जब भगवान् छद्मस्थ अवस्थामें विचरतेथे तब "गीला या सूखा, ठंढा या ऊना, उस रोजका

या बहुत रोजका, सरस या निरस, सार या असार, घृतवाला या बिना घृतका, लुखा और क्षीरका भोजन या उडदके बाकुले आदि जैसा आहार मिलता वैसा लेतेथे, यदि उडदके बाकुले आदि निरस आहार भी न मिलता तोभी अदिन्न मनसे समभाव रहतेथे" ऐसा आचारांग सूत्रमें कहाहै परंतु उसमें वासी रोटी, खीचडी आदि लेनेका नाम नहीं है और बहुत दिन का ठंढा वासी आहारमें सूखी पुडी, खाजा, लड्डु, घेवर, खाखरे, भुनेहुए चने और चने या चावलके आटेका शातु आदि अनेक वस्तु निर्दोषहैं, उनको भी बहुत रोजका ठंढा आहार कहा जाताहै, ऐसी वस्तु लेनेमें कोई दोषनहींहै इसलिये भगवान्के नामसे आचारांग सूत्रका नाम आगे करके वासी रोटी, खीचडी आदि खानेवाले सूत्र के ऊपर और भगवान्के ऊपर झूंठा दोष लगातेहैं तथा असंख्य त्रस जीवोंका भक्षण करके पापके भागी होतेहैं।

१७. फिरभी देखो विचारकरो भगवान् अनंत बल वीर्य पराक्रम वालेथे, दिव्यज्ञानी, शुद्ध उपयोगी, अप्रमादी, निर्ममत्वी, मास क्षमण आदि तपस्याके पारणे में तीसरे प्रहरमें अपरिचय वाले अज्ञात घरोंमें गौचरी जाने वालेथे, अनेक तरहके उपसर्ग और परिसह सहन करके केवलज्ञान प्राप्त करके जगत्के ऊपर अनंत उपकार करके मोक्षगयेहैं परंतु ढूंढियोंमें ऐसे एकभी गुण नहीं किंतु विशेष करके अपने रागी भक्तोंके घरोंमें गौचरी जातेहैं ममत्वभावसे व लोभ दशासे सरस २ गरीष्ट आहार लेकर शरीरको पुष्ट करतेहैं और अपने स्वादके लिये या विहारमें भातारूप आहार अपने साथमें लेजाने के लिये सूर्यका उदय होतेही गृहस्थों के घर जाकर वासी रोटी आदि व बहुत दिनों का आचार और चुल्हे परका प्रायःकच्चा जल लेतेहैं फिर भगवान्के नाम से लोगोंको बहकाकर अपनी अज्ञान कल्पनाको पुष्ट करते हुए त्रस जीवोंकी उत्पत्ति वाला आहार खाकर निर्दोष बनतेहैं, यही बडी अज्ञानताहै।

१८. देखो शामको चारबजे कोई साधु किसी गृहस्थके घरमें गौचरी गया होवे उसके रसोई होनेमें देरीहोवे तो वह कहताहै कि महाराज गरम रसोईमें थोडा विलंबहै परंतु फजरकी ठंडी रोटी हाजरहै लीजिये, इसप्रकार फजर का बनाया हुआ आहार शाम को ठंढा कहा जाताहै, भगवान् तीसरे प्रहर गौचरी जातेथे तब ठंढा आहार मिलता

था इसलिये ठंढा आहार लेनेका सूत्र कारने बतलाया है। ढूंढियों को इस बात का ज्ञान नहींहै इसलिये रात्रि वासी रोटी, बाजरी का रोटला, खीचडी, आदि ठंढा आहार को निर्दोष समझ कर लेतेहैं, यही बडी अनसमझ है। कहनेका सारांश यही है शीरा रोटी नरमपुडी आदि में जलका अंश ज्यादे रहताहै, जिससे चार प्रहर बाद् जीवोंकी उत्पत्ति होतीहै उससे ऐसी वस्तु दूसरे रोज लेना योग्य नहींहै और लड्डु आदि मीठाई में पक्की चासनी होने से जलका अंश कम रहताहै जिससे यदि मीठाई न बिगडने पावे तो वर्षा कालमें १५ रोज तक उष्ण कालमें २० रोज तथा शीत कालमें उत्कृष्ट एक महीना तक जीव उत्पन्न नहीं होते, उससे ऐसी वस्तु दूसरे रोज लेनेमें दोष नहींहै, जिस परभी ढूंढिये लोग 'मीठे लडु लेते हो उसीतरह वासीठंडीरोटी क्यों नहीं लेते' ऐसी कुयुक्ति लगाकर लडुकी तरह वासीरोटी लेनेका ठहरानेवाले अपनी बडी अज्ञानता प्रकट करतेहैं।

---

१९. मक्खण (लोणी) छाछमेंसे बाहिर निकालनेपर तत्काल अंतर मुहूर्त्तमेंही उसी वर्णकी फुलण आदि अनेक जीवोंकी उत्पत्ति होतीहै, और अन्यभी उन्माद, प्रमाद वगैरह दोषोंको बढाने वालाहै इसलिये धर्मी श्रावक और साधुको मक्खण खाने योग्य नहींहै, ढूंढियोंको इस बातकाभी ज्ञान नहींहै, इसलिये ढूंढिये साधु मक्खण लाकर खातेहैं, यह भी अनंतकायकी विराधना का हेतु होनेसे त्याग करना योग्यहै।

---

२०. मधु (सहत) में मक्खियोंका व मक्खियोंके इंडोंका रस मिला हुआ रहताहै तथा उसमें अनंतकायकी व उसीवर्णके त्रस जीवों की भी उत्पत्ति होतीहै, जिससे धर्मी श्रावकभी सहतको अभक्ष समझ कर दवाईमेंभी खाने का पाप समझते हुए नहीं खाते, जिसपरभी ढूंढियों को इस दोष का ज्ञान नहींहै, इसलिये ढूंढियें साधु सहत खातेहैं, यहभी अभक्ष होनेसे त्याग करना योग्यहै।

---

२१. दूधमें गुड मिलानेसे उसमें तत्काल सुक्ष्म असंख्य जीवों की उत्पत्ति होतीहै और दारु (सराब) समान दोष होताहै, जिससे कोई २ ब्राह्मण वगैरह उत्तम हिंदु कभी देवी देवताओं को दारु चढानेकी जगह दुध-गुड मिलाकर चढातेहैं यह प्रत्यक्ष प्रमाणहै, इसलिये अभक्ष होनेसे जैनियों को खाने-पीने योग्य नहींहै। ढूंढियोंको इस बातकाभी ज्ञान नहीं, ढूंढियेसाधु दूधमें गुड मिलाकर खाते-पीतेहैं यहभी त्यागकरने योग्यहै।

---

२२. आषाढ महीनेमें आद्रा नक्षत्र बैठनेपर वर्षाऋतु गिनी जाती है, जिससे आंबके फलमें जीवोंकी उत्पत्ति होतीहै, स्वादभी बदल जाताहै इसलिये पूर्वाचार्योंने गुजरात, मारवाड, कच्छ, मालवा, मेवाड, दक्षिण वगैरह देशोंमें आद्रा नक्षत्र बैठेबाद धर्मी श्रावकोंको आंब खानेका त्याग करना बतलायाहै, जिससे आंबेका अचित्त रसकोभी संवेगी साधु नहीं लेते। ढूंढियोंको इस बातकाभी ज्ञान नहीं है, इसलिये आद्रा बैठेबाद आंबका रस लेतेहैं, यहभी त्रस जीवोंको भक्षण करनेका दोष होनेसे त्याग करने योग्यहै।

---

२३. ढूंढिये साधु जब आहारादिके लिये गृहस्थोंके घरमें जातेहैं, तब चौरकी तरह चुपचाप चलेजाते हैं, यहभी अनेक अनर्थोंका मूल है क्योंकि देखो- गृहस्थोंके घरमें चुपचाप चले जानेसे बहुत जगह बहु, बेटी आदि खुले शीर बैठी हों, शरीरकी शोभा करती हों, कभी स्नान करते समय, वस्त्र बदलते समय वस्त्र रहित हों या कभी कोई स्त्री-पुरुष आपसमें हास्य विनोद काम चेष्टा वगैरह करतेहों ऐसे समय यदि चुपचाप साधु घरमें चला आवे तो लज्जा जातीहै, अप्रीति होतीहै, किसी को क्रोधभी आजावे, उलंभा मिलताहै, या कभी अकेली वस्त्र रहित स्त्री को देखकर साधु को विकार उत्पन्न होजावे अथवा ऐसे समय साधुको देखकर स्त्रीका चित्त बिगड जावे तो बडा अनर्थ होजावे। कभी अन्य दर्शनीके घरमें चुपचाप चले जानेपर झगडा होजावे, गालियें खानी पडें, शासनका उडाह होवे, इसलिये चौरकी तरह गृहस्थों के घरमें चुपचाप चलेजाना बहुत अनर्थका मूल होनेसे सर्वथा अनुचितहै।

२४. फिरभी देखिये- अच्छी नीतिको जानने वाले विवेकी गृहस्थ लोग भी अपनी बहु बैन बेटी आदिकी बे शर्मी अवज्ञा न होनेके लिये अपने या अन्य किसी के घरमें चुप चाप नहीं जाते, किन्तु खुंखारा, कासी आदि चेष्टा करके या किसी तरहका आवाज करके पीछे घरमें प्रवेश करते हैं तो फिर सर्वज्ञ पुत्र कहलाने वाले जैनसाधु नाम धराने वाले होकर प्रत्यक्ष जगत्के व्यवहार विरुद्ध गृहस्थोंके घरमें चौरकी तरह चुपचाप चलेजाना, यह कैसी अज्ञानदशा कहीजावे। यदि कोई शंका करेगा कि किसी तरहकी आवाज करके जानेसे भक्तलोग अशुद्ध आहार को शुद्ध करके देंगे, जिससे साधुको चुपचापही जाना योग्य है, यहभी

अन समझकी बातहै क्योंकि जैनसाधुको पूर्वकर्म और पश्चात्कर्म आदि बहुत बातोंका पूर्वापर उपयोग रखकर आहार आदि लेनेकी सर्वज्ञ भगवान्की आज्ञाहै जिस साधु को पूर्वापरका (आगे-पीछेका) इतनाही उपयोग नहीं होगा वह साधु आहार आदिके लिये गृहस्थोंके घरमें जानेके योग्यही नहीं है। देखो संवेगी साधु 'धर्मलाभ' का उच्चारण करके गृहस्थोंके घरमें प्रवेश करतेहैं और सब तरहसे उपयोग पूर्वक निर्दोष शुद्ध आहार लेतेहैं (धर्मलाभ कहना शास्त्रानुसार युक्तियुक्त प्राचीन नियमहै इसको नयी कल्पना कहने वाले ढूंढियोंकी बडी भूल है इसका विशेष खुलासा आगे लिखनेमें आवेगा)

२५. फिरभी देखो-खास ढूंढियों का ही छपवाया हुआ निशीथ सूत्रके चौथे उद्देशमें पृष्ठ ४२-४३ में "जे भिक्खू निग्गथीणं उवस्सयंसि अविहाए अणुप्पविसई, अणुप्पविसंतं वा साइज्जइ ॥ २५॥ अर्थः— जो साधु साध्वीके उपाश्रयमें अपना आगमन जानाये बिना [खांसी आदि किये बिना] प्रवेश करे, प्रवेश करते को अच्छा जाने ॥ २५ " तो प्रायश्चित्त आवे। इस लेखमें जब साध्वीके उपाश्रयमें भी किसी प्रकार की सूचना किये बिना जानेवाले साधुको प्रायश्चित्त बतलायाहै। इस बातपर विचार किया जावे तो वहु, बैन, बैटी, दासी वाले गृहस्थोंके घरोंमें चौरकी तरह चुपचाप चले जाने वाले प्रत्यक्ष जिनाज्ञाकी विराधना करके अनेक अनर्थका मूल और भावहिंसाका हेतु होनेसे त्याग करने योग्यहै।

---

२६. ढूंढिये साधु नित्य पिंडका दोष टालनेके लिये एकातरे वारा बंधीसे गौचरी जातेहैं, यहभी अनर्थका हेतुहै क्योंकि देखो ढूंढियों के भक्त गृहस्थ लोग यह बात अच्छी तरहसे समझ लेते हैं कि साधु आज हमारे घर गौचरी आये हैं कल रोज न आवेंगे, परसों आवेंगे, जिससे वे लोग वाराके रोज जल्दीसे आहार आदि बना कर धर रखते हैं। ढूंढिये साधु उस आहार पानी आदिको ग्रहण करते हैं उससे आधाकर्मी आदि अनेक दोष लगते हैं, खास साधुके आनेके उद्देशसे जल्दी छ कायकी हिंसा होतीहै, ढूंढिये ऐसे आहारको निर्दोष समझतेहैं; परंतु तत्त्व दृष्टिसे दोष वालाहीहै और नित्य पिंडभीहै। जैनसाधुकी अज्ञात और अनितय गौचरी कहीहै कभी लगोलग २-४ रोज एकघर में चले जावें और १-२ रोज या ५-७ रोज न भी जावें परंतु आज आये,

कल न आवें, परसों आवेंगे; इत्यादि किसी तरहका नियम न होना चाहिये । एक रोजकी बातहै हमारे गुरु महाराज नागोर शहरमें एक ढूंढियोंके बडे श्रावकके घरमें गौचरी गयेथे, उसघरमें सिर्फ १-२ मनुष्य चौकेमें भोजन करने वालेथे, परंतु आहार, पानी, मीठाई वगैरह बहुत वस्तुओंका योग देखनेमें आया. किसीको पूछनेपर मालूम हुआ कि आज अमुक ढुंढिये साधुओंके गौचरी आनेका वाराहै, जिससे यह सामग्रीकी तैयारीहै. फिर दूसरे रोज खास परीक्षा करनेके इरादेसे उसी घरमें गुरु महाराज गौचरी चलेगये, परंतु कुछभी नया आहार आदि सामग्री न देखनेमें आयी परंतु पहिले रोज का बचा हुआ ठंढा भोजन करते देखनेमें आये और तीसरे रोज किसी नोकरसे फिर मालूम हुआ कि आजभी पूज्यजी का वारा होनेसे सामग्री तैयारहै. इस प्रकार वारा बंधीसे गौचरी जानेसे छ कायकी हिंसा, आधाकर्मी और स्थापनादोष आदि अनेकदोष आतेहैं यहभी त्याग करने योग्यहै।

---

२७. चने, उडद, मुंग, तुयर वगैरह दोफाड वाले धानको कचे दही, छाछ, दूधमें मिलानेसे उसको विदल कहा जाताहै। जैसे बडे, पकोडी, चीलरी, पीतोड आदिमें कचा दही या छाछ डालकर रायता बनातेहैं, खीचडीमें दही—छाछ डालकर खातेहैं और बेशणमें कचा दही छाछ मिलाकर कढी करतेहैं उसमें तत्काल सुक्ष्म त्रसजीवोंकी उत्पत्ति होतीहै, ऐसा आहार खानेसे त्रस जावोंकी हानि होतीहै, बुद्धिमंद होतीहै, कभी किसी प्रकारका रोगभी हो जाताहै इत्यादि कारण होने से ऐसी वस्तु जानकार संवेगी श्रावक कभी नहीं खाते और संवेगी साधुभी नहीं लेते। ढूंढियोंको इस बातकाभी ज्ञाननहीहै जिससे ढूंढिये श्रावक ऐसा विदल बनातेहैं, खातेहैं, ढुंढिये साधुभी लेकर खातेहैं उसमें असंख्य त्रसजीवोंकी हिंसा होनेसे विदल वस्तु खानेका त्याग करना योग्यहै।

२८. अमोलकऋषी वगैरह कितनेही ढूंढिये विलदमें जीवोंकी उत्पत्ति मानतेहैं, 'जैनतत्त्वसार' में बाईस अभक्षके अधिकारमें पृष्ठ ५९३ वें में लिखतेभी हैं, परंतु व्यवहारमें नहीं लाते, खानेका त्याग नहीं करते, ढूंढिये श्रावकोंको उपदेश भी नहीं देते, यहभी स्वादका लोभही है। बहुत ढूंढिये विदलमें जीवोंकी उत्पत्ति नहीं मानते और कहतेहैं कि विदलमें हमको प्रत्यक्ष जीव बतलावो, ऐसे अनसमझ

ढूंढियोंको मेरा इतनाही कहनाहै कि जिसप्रकार पांचस्थावर तथा संमूर्च्छिम के १४ स्थानक निगोद आदिमें असंख्य व अनंतजीव ज्ञानियोंनेकहे हैं, उन जीवोंको कोईभी मनुष्य आंखोंसे प्रत्यक्ष नहीं देख सकता, किंतु उनमें तो ज्ञानी के वचनपर श्रद्धा रखकर जीव दयाका व्यवहार किया जाता है. उसी प्रकार विदलमेंभी ज्ञानी महाराजने जीव उत्पन्न होनेका कहाहै, इसलिये ज्ञानीके वचनपर श्रद्धा रखकर विदल वस्तु खानेका त्याग करना योग्य है और प्रत्यक्ष जीव देखनेकी कुयुक्ति करना मिथ्यात्वका हेतु होनेसे व्यर्थ है।

---

२९. साधुको ठहरनेके लिये मकान देने वाले मालिकका घर शय्यातर होताहै, उसके घरका आहार आदि साधुको लेनेकी सर्वतीर्थंकर महाराजोंकी मनाईहै, ढूंढिये साधु लोग मकानके मालिकका घर शय्यातर न करतेहुए मकानमें ठहरनेकी आज्ञा देनेवाले नौकर या पाडोसी आदि अन्यका घर शय्यातर करके मकानके मालिकके घरका आहारादि लेतेहैं, यहभी सर्वथा शास्त्र विरुद्धहै। बडे आदमीके अनेक नौकर होतेहैं उसमेंसे एक नौकरका घर शय्यातर मानकर खुद मालिकके आहारादि लेनेसे दृष्टिरागसे छ कायकी हिंसा वाला सदोष आहार मिलताहै, प्रमाद बढ जाताहै उससे दूरके घरोंमें आहार आदिके लिये जानेमें आलस्य आताहै और मकान मिलनेकी दुर्लभता वगैरह अनेक दोषलगतेहैं, जिनाज्ञाकी विराधनाहोतीहै इसलिये यह रिवाजभी त्याग करने योग्यहै।

---

३०. ढूंढिये साधु-साध्वियों के खास ठहरनेके लिये स्थानक बनानेमें आतेहैं, उसमेंभी छ कायकी हिंसा होतीहै, आधाकर्मी दोष आताहै, जिनाज्ञाका उल्लंघन होताहै। स्थानकमें ठहरनेके कारणसेही स्थानक वासी नाम प्रसिद्धहै, यहभी छ कायकी हिंसाका हेतु त्याग करने योग्यहै।

---

३१. ढूंढिये साधु लसण-कांदे आदि अनंत काय (कंदमूल) की चटनी वगैरह ले कर खातेहैं, फिर निर्दोष ठहरानेके लिये 'दशवैकालिक' सूत्रका प्रमाण बतलातेहैं यहभी पूरी २ अज्ञानताहै, क्योंकि देखो-जो साधु तपस्वी शरीरकीभी ममत्वरहित समभाव वाला पूरा २ निर्दोष लूखा सूखा निरस आहारसे अपना संयमका निर्वाह करने वाला होवे, वह साधु अनुक्रमसे अपरिचय वाले अज्ञात घरोंमेंसे जैसा

तैसा शुद्ध आहार लेकर शरीरको भाडा देताहै, ऐसे शुद्ध साधुको यदि कभी कंदमूलका शाक आदि मिलजावे तो निर्ममत्व भावसे ले, उसमें कोई दोष नहीं है, इसलिये उन उग्रविहारी साधुओंके लिये दशवैकालिक सूत्रमें लेनेका कहाहै परंतु ढूंढिये साधुतो प्रायः करके महेश्वरी, अग्रवाल, दिगंबर श्रावगी आदि उत्तम जातिके बहुत घरोंको बीचमें छोडकर अपने परिचयवाले रागी भक्तोंके घरोंमें गौचरी जाते हैं और खास ममत्वभाव लोभदशासे अपने जीभके स्वादके लिये, शरीरकी पुष्टिकेलिये, रोटी अधिक खानेके लिये और प्रत्यक्षही संयोजना नामक दोष सेवन करनेके लिये कंदमूलका साक व लसण, कांदे की चटनी आदि लेतेहैं, यह सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्धहै। इसलिये दशवैकालिक सूत्रके नामसे कंदमूल की वस्तु लेकर खाने का ठहराना अनंत जीवोंकी घातका हेतुहै। देखो-बौद्धमतके साधु दियाहुआ मांस खाने लगगये तो सब बौद्ध समाज मांस भक्षण करनेवाला हिंसक बनगया. इसीतरह ढूंढिये साधुभी मिलेसो लेतेहैं, ऐसा कहकर कंदमूलकी वस्तु लेने लगगये उससे ढूंढियों के श्रावक समाजमें प्रायः सैंकडे ९५ टके लोग कंदमूल खाने वाले होंगे और संवेगी साधुओं ने वैसी वस्तु लेना छोड़ दिया तो संवेगी श्रावकोंमेंभी प्रायः सैंकडे ९५ टका लोगोंने कंदमूल खानेका छोड़दियाहै यह प्रत्यक्ष प्रमाणहै इसलिये अनंतजीवोंकी दयाके लिये ढूंढिये साधुओंको वैसी वस्तु लेकर खानेका त्याग करना योग्यहै।

३२. फिरभी देखिये 'धर्मरूचि' अनगार मास क्षमणके पारणे गौचरी गये वहां अकेला कडवा तुंबाका शाक मिला उसमेंही संतोष रखकर उसको राग द्वेष रहित होकर खा लिया. तथा 'धन्नाजी' अनगार गौचरी जातेथे तब उनको कभी अन्न मिलजाता परंतु पाणी नहीं मिलता तोभी संतोष रखतेथे, ऐसी २ सैंकडों बातें आचारांग, ज्ञाताजी, अनुत्तरोववाई आदि आगमोंमें बतलायीहैं, उस मुजबतो कोई भी ढूंढिया चलता नहीं और लोभसे अपने स्वाद के लिये कंदमूलकी वस्तु लेनेका सूत्रके नामसे पुष्ट करके निर्दोष बनते हैं यह कितना भारी अधर्म है।

३३. फिरभी देखिये विचार करीये-यद्यपि कोइ वस्तु निर्दोष होवे तोभी लोक शंका करें, और जीव हिंसाका हेतु होवे, अधर्म बढे तो वैसी वस्तु साधुको नहीं लेना चाहिये उसी तरहसे हरे कंदमूलकी

वस्तुभी साधुको सर्वथा लेना योग्य नहींहै, जिसपर भी जो ढूंढिये साधु लेतेहैं वो लोग अनंत जीवोंकी हिंसाका दोषके भागी आप होतेहैं और दूसरोंकोभी बनातेहैं, यह बात हमने दक्षिण व खानदेशमें धूलिया वगैरह बहुत गांवोंमें ढूंढियोंके श्रावकोंके घरमें प्रत्यक्ष देखीहै. वे लोग हमको आलु- कांदे का शाक देनेलगे, हमने कहा तुमलोग दया पालने वाले कहलाकर कंदमूलके अनंत जीवों को खातेहो, तब वे लोग बोले हमारे साधुभी खातेहैं, जब हमने समझाकर उपदेश दिया, तब समझ गये. इसलिये ऐसी वस्तु साधुको नहीं लेना चाहिये, जिससे गृहस्थ लोगभी त्यागकरें। पहिलेके साधु शहर बाहर रहतेथे, अकस्मात गांव में आकर निर्दोषमिला सो लेकर चलेजाते थे परंतु अब अपनेलोग गांव में व भक्तोंके पासमें रहतेहैं इसलिये द्रव्य-क्षेत्र-काले भाव देखकर बहुत वस्तुओंका बचाव करना उचितहै किंतु सूत्रकी बातें आगे लाकर पेट भराईको पुष्ट करना उचित नहींहै।

३४. ढूंढिये साधु-साध्वी अपनी पूजा मानताके लिये अपने भक्तोंको अपने दर्शन करानेके लिये खास युक्ति पूर्वक बैठकर अपना फोटो उतरवातेहैं, अपने भक्तोंको दर्शनके लिये देतेहैं, उस फोटोको धोकर साफ करनेमें बहुत जल दुलताहै, जिससे अपकाय आदि छ कायके असंख्य व अनंत जीवोंकी हिंसा होतीहै (जिनराजकी मूर्तिकी, फोटोकी निंदाकरतेहैं और अपनीफोटो दर्शनकेलिये देतेहैं यही बडा अधर्महै) इस लिये यहभी हिंसाकाकार्य त्याग करनेयोग्यहै। अनुमान २०-२५ ढूंढिये साधु-साध्वियोंके फोटो हमारेपास मौजूदहैं किसीको देखनेकी इच्छा होतो हमारे पास आकर देख सकतेहैं।

३५. ढूंढिये व तेरहापंथी साधु अपने २ भक्तोंकी चौमासेकी विनंती फागण चैत्र वैशाखमें पहिलेसेही मानलेतेहैं, जिससे वे लोग साधुके ठहरनेके और साधुको वंदना करनेको आने वालोंको ठहरनेके लिये मकानोंको लीपना, झाडना, पोताई करवाना वगैरहसे सफाई करवानेमें त्रस-स्थावर अनंत जीवोंकी हिंसा करतेहैं और साधुको वंदनाके लिये आनेवाले प्राहुणोंकी भोजन भक्तिकी सामग्रीके लिये आटा, शक्कर, लकडी आदि खरीदकर इकट्ठे करलेतेह, उनमें वर्षाके दिनोंमें असंख्य जीवोंकी उत्पत्ति व हानि होतीहै. यह अंध श्रद्धाकी गुरुभक्तिका रिवाज सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्ध और प्रत्यक्ष छ कायके जीवोंकी हिंसा कराने वाला

होनेसे साधु और श्रावक दोनोंको संसारमें डुबाने वालाहै इसलिये भवभीरु आत्मार्थियोंको अवश्य त्याग करने योग्यहै ।

---

३६. ढूंढियोंमें जब कोई दीक्षा लेताहै तब तपस्याके पूरके महोत्सवकी तरह वंदनाके लिये आनेवाले लोगोंकी भक्तिमें अनेक तरहके आरंभमें छ कायके अनंत जीवोंकी हिंसाकरतेहैं तथा विशेषतामें वरघोडे में मुसलमान, ढोली आदिको बुलवाकर नगद पैसे देकर खुले मुँह वाजित्र बजवातेहैं, हजारों लोग दोडादोडसे त्रस स्थावर जीवोंका नाश करते हैं, लुगाईयें खुले मुह गीत गातीहैं, प्राहुणोंकी भक्तिके लिये मीठाईयोंका भट्ठी खाना चलताहै यहभी हिंसाका कार्य त्याग करना योग्यहै ।

---

३७. ढूंढिये श्रावक श्राविका मुंह बांधकर स्थानकमें इकट्ठे होकर दया पालतेहैं, उसरोज घरमें बनीहुई ताजी रसोई नहीं खाते और हलवाईके वहांसे मणोंबंध मीठाई मौल मंगवाकर खातेहैं, बडे खुशी होते हैं, आज हमने छ कायकी हिंसा टाली, बडी दया पाली. ढूंढियोंका यह कर्तव्यभी तत्त्वदृष्टिसे बड़ी हिंसाका हेतुहै, क्योंकि हलवाईके भट्टीखानेमें कीडे, मकोडे, रात्रिको पतंगीये वगैरह अनेक त्रस जीवोंकी हिंसा होतीहै अयत्नासे अनछाना वासी जल व बहुत रोजका जीवाकुल मेदा, खांड़का रस वगैरहमें मक्खी मच्छर आदि हिंसाका पार नहींहै तथा मलीनता, अशुद्धि प्रत्यक्षहीहै. यह सब हिंसा मीठाई मौल मंगवाकर खाने वालोंको लगतीहै । जिस प्रकार कसाई खाने में जितनी जीव हिंसा होतीहै उसमें जीवोंको खरीदनेके लिये व्याज से रुपया देने वाले, बेचने वाले, दलाली करने वाले, खरीदने वाले, जीव मारने वाले, नौकरी करने वाले, मांस बेचने वाले, पकाने वाले और खाने वाले यह सब लोग हिंसाके पापके भागी होतेहैं. उसी प्रकार हलवाईकी हिंसाभी मौल मंगवाकर खाने वाले सबको लगतीहै इसलिये सामायिक आदि व्रतवाले श्रावकोंको हलवाईके वहांकी वस्तु मौल मंगावाकर खाना यह अनंत हिंसाका पाप, जिनाज्ञा की विराधना और मिथ्यात्व बढाने वाला होनेसे सर्वथा अनुचितहै। देखो-कई २ व्रतधारी श्रावक-श्राविका १४ नियम धारण करनेवाले और अन्यभी विवेकवाले बहुतसे श्रावक हलवाईके वहांकी मीठाई खानेका त्याग करतेहैं, यह प्रत्यक्ष प्रमाणहै । ढूंढियोंको इस बातका ज्ञान नहींहै, जिससे दया पालनेके रोज व्रतमें रहते हुएभी हलवाई खानेकी हिंसाके भागी होतेहैं । यह अज्ञान दशाभी हिंसाकी हेतु होनेसे त्याग करने

योग्यहै। यदि सच्ची दया पालन करना होतो दया पालनेके रोज उपवास वगैरह व्रत करो अथवा घरमेंसे सुके खाखरे दही-छाछ आदिका थोडासा सहारा लेकर रस त्याग व उणोदरी तपका लाभ लो, यह सच्ची दयाका पालन करते नहीं और जलेबी, घोलबडोंका रायता आदि अभक्ष खाकर भट्ठीखानेका पाप ले करकेभी दया समझ बैठेहैं, ढूंढियोंमें दयाके नामसेभी हिंसाका पार नहीं, यही बडी अज्ञानताहै।

---

३८. जब ढूंढियोंके कोई साधु या साध्वी काल कर जातेहैं तब उसके मुर्देको १-२ रोजतक रख छोडतेहैं, आसपासके गांव वालोंको पत्र या तारआदिसे सूचनादेकर मुर्देके दर्शनकेलिये लोगोंको बुलवातेहैं, मांडवी (चकडोल) की बडी सजावट करके नगारे निसाण गाजेबाजे व नाईयोंको बुलवा कर दिन दुप्रहरको दीवी (मसालें) जलाते हुए गीतगान करते हुए भजन मंडलीके साथ अग्निसंस्कारके लिये ले जातेहैं। गये वर्ष पंजाब देशमें रावलपिंडीमें ढूंढियोंके साधुके मुर्देको दो रोज तक सजावट वाले कमरेमें रक्खाथा और बडे आडंबरसे जलानेको ले गयेथे फिर दो रोज बाद उसके फोटोकी खूब धामधुमके साथ स्वारी निकालीथी, यह बात उसी समय ढूंढियोंके वर्तमान पत्रोंमें व जैन, जैन बंधु आदिमेंभी प्रकट हुईथी तथा काठीयावाड़में जेतपुर मोढवाडीमें मृत माणेकचंद ढूंढिया साधुके अग्निसंस्कारकी जगह निर्वाण मंदिर बनवायाहै, दर्शनके लिये फोटो स्थापन कियाहै और वार्षिक तिथिके रोज निर्वाण मंदिरके सामने बडा मंडप बनवातेहैं, ध्वजा-पताकाओंसे बडी शोभा करतेहैं, नोबत नगारे बजवातेहैं, फोटोके दर्शनकर गुरु-गुण गातेहैं, यह बात अमदाबादसे संवत् १९८२ पौषमहीनेमें "स्थानक वासी जैन" नामक खास ढूंढियोंके मासिक पत्रके पृष्ठ ३१ में प्रकटहुईहै। औरभी लुधीयाना, रायकाट, अंबाला, बर्नाला इत्यादि पंजाब, मारवाड, काठीयावाड आदि देशोंमें ढूंढिये साधुओंकी याद गिरीके लिये छत्री, घुमटी, निर्वाणमंदिर बनेहुए मौजूदहैं तथा दर्शनके लिये चरण स्थापना व फोटोकी स्थापना की है। इस प्रकार राग द्वेष क्रोध मान माया लोभ आदि अनेक दोष वाले आठ कर्म सहित चारगति संसारमें फिरने वाले और जिसकी गतिका ठिकाना नहीं उनकी भक्तिके लिये ऐसे २ हिंसाके कार्य ढूंढिये साधु अपने गुरुकी महिमाके लिये भक्तोंसे करवातेहैं और परम उपकारी अनंतगुण सहित आठकर्म रहित होकर मोक्षमें गये ऐसे

तीर्थंकर परमात्माकी निर्वाण भूमि समेत शिखर, गिरनार, शत्रुंजय,चंपापुरी,पावापुरी आदिमें जानेकी व दर्शन भक्ति करनेकी निंदाकरके त्याग करवातेहैं और दर्शन-भक्ति (जिनराजके अनंत गुणोंका स्मरण ध्यान) आदि आत्महितके शुभकार्यों की अंतराय देते हैं. यही ढूंढियोंका प्रत्यक्ष हठाग्रहका मिथ्यात्वहै ।

३९. पन्नवणा सूत्र में लिखाहै कि मनुष्यके मुर्देमें दो घडी बाद अंगुलके असंख्य भाग प्रमाण छोटे शरीर वाले संमूर्च्छिम मनुष्य पंचेंद्रीय असंख्य जीव उत्पन्न होतेहैं। ढूंढियोंके कोई साधु-साध्वी जब कभी दुप्रहरको २-३ बजे काल कर जातेहैं तब ढूंढिये श्रावक शामतक और रात्रिभर गेश आदिकी रोशनी करके चकडोल बनानेमें लगा देते हैं फिर दूसरे रोज दुप्रहरको सब लोगोंको इकट्ठे करके जलानेको ले जातेहैं वहां बडे २ लकडोंकी पोलार में सर्प, विच्छु, चुहा, कीडी नगरे आदि अनेक जीवोंका नाश करतेहैं। यह असंख्य पंचेंद्रीय जीवोंकी बडी हिंसा करने का ढूंढिये साधु अपने भक्तोंको त्याग करवाते नहीं और दया भगवतीके नामसे स्नान करनेका त्याग करवातेहैं, जिससे ढूंढिये साधु-साध्वीका मुर्दा जलाकर बहुत ढूंढिये श्रावक स्नान नहीं करते, यह उत्तम हिंदु जातिको व ढूंढिये समाज को अपवाद रूप कैसी बडी भारी अज्ञानताहै। यदि ढूंढिये कहें कि भगवान्के शरीरका अग्निसंस्कारकरके इन्द्रादि देव भी स्नान नहींकरते; यहभी ढूंढियोंका कहना झूठहै, इन्द्रादि देव स्नान नहीं करते ऐसा किसी जैनशास्त्रमें नहीं लिखा, जिसपरभी यदि मान लिया जावे तोभी विचार करने की बातहै कि इन्द्रादि देवोंका शरीर कपूरके ढेरकी तरह दिव्य सुगंधवाला हाड मांसादि रहित वैक्रियहै, इसलिये जिस प्रकार हवाको किसी तरहका सुतक नहीं लगता, उसी प्रकार हवारूप देवताओंके शरीरकोभी किसी प्रकार का सुतक नहीं लग सकता। और मनुष्योंका शरीर हाड मांस आदि अशुचि पुद्गलोंका बना हुआ उदारिकहै, जैनशास्त्र व हिंदुधर्म मुजब जन्म-मरण मुर्दाका सुतक अवश्य लगताहै, इसलिये देवताओं की तरह स्नान नहीं करनेका ले बैठना बडी अज्ञानता है। हां इतनी बात जरूरत है कि विवेकवाले धर्मी श्रावकोंको नदी, तालाव, वावडी आदिमें अनछाना जलमें स्नान करनेसे नदी आदि सबकी क्रिया लगती है. फुंआरे आदि त्रसजीवोंकी व नीलण-फुलण वगैरह अनंत

जीवोंकी हानि होतीहै इसलिये ऐसा करना योग्य नहीं परंतु निर्जीव सूखी जगहमें छानेहुए थोडे जलसे या गरम जलसे स्नान करनेका गृहस्थको त्याग नहीं बन सकता।

४०. दूसरी बात यहभीहै कि इन्द्रादि देव भगवान्के शरीरका अग्नि संस्कार खास धर्म बुद्धिसे भगवान्की भक्तिके लिये करते हैं वहां से नंदीश्वरद्वीपमें जाकर वहां के शाश्वत चैत्यों (सिद्धायतनों) में शाश्वत जिन प्रतिमाको वंदन-पूजन भक्तिभावसे जिन गुण गाते हुए अट्ठाई महोत्सव करतेहैं। यह अधिकार खास ढूंढियोंके छपवाये जंबूद्वीपपन्नत्तिसूत्रमें आदीश्वर भगवान्के निर्वाण अधिकार में, जीवाभिगमसूत्रमें तथा स्थानांगसूत्रके चौथेठाणेमें नंदीश्वरद्वीपके वर्णन अधिकारमें खुलासा सहित लिखाहै। पाठकगण ढूंढियोंके सूत्र निकालकर यह प्रत्यक्ष प्रमाण देख लें, जब इन्द्रादि देवोंकी तरह गुरुका मुर्दा जलने की बात ढूंढिये मान्य करतेहैं, तब देवोंकी तरह जिनप्रतिमाकी पूजा व अठाई महोत्सव आदि जिनभक्तिके कार्य करनेकाभी ढूंढियोंको मान्य करना चाहिये, जिसपरभी जिनपूजा-भक्तिकी निंदाकरके मनाई करतेहैं, यह प्रत्यक्षही झूठा हठाग्रहहै। देवता जिन प्रतिमाकी पूजा मोक्षके लिये करतेहैं, इस विषयकी सब शंकाओंका समाधान सहित आगे लिखनेमें आवेगा।

---

४१. यदि ढूंढिये श्रावक कहें कि हमलोग यह सब कार्य संसार खाते करतेहैं, परंतु धर्म बुद्धिसे नहीं. यहभी ढूंढियोंका कथन झूठ है, क्योंकि तपस्याके पूरके महोत्सवमें मंडप बनवाना, ध्वजा पताकाएं लगवानी, साधुका फोटो उतरवाना, मुर्दाका महोत्सव करना, छत्री या निर्वाण मंदिर बनवाने, उसमें लोगोंके दर्शनके लिये साधुके चरण पादुका या फोटो स्थापन करना, तथा साधुके उपदेशसे गरीबोंको अन्न-वस्त्रादि देना, मीठाई बनवाकर प्रभावना बांटनी, पशु छोडाने, पाठशाला-अनाथालय स्थापन करवाने, शास्त्र छपवाने, स्थानक बनवाने, चौमासामें साधुको वंदना करनेको जाना, दीक्षा महोत्सव करना, साधुको लेनेको व पहुंचानेको जाना इत्यादि यह सब कार्य विवाह शादी ओसर- मोसरकी तरह किसी तरह संसार संबंधी नहींहै किंतु साधुके तपस्याके पूर आदिके नामसे पत्रिका छपवाकर तार देकर आग्रह पूर्वक लोगोंको बुलाकर किये जातेहैं, यह प्रत्यक्ष गुरु भक्ति है। ढूंढिये

अपने गुरुकी महीमा बढानेके लिये ऐसे २ हिंसाके कार्य करतेहैं और अनंत उपकारी श्रीतीर्थंकर परमात्माकी पूजा भक्तिकी निंदाकरते हुए दर्शन करनेको जानेवालोंको मनाई करके अंतराय बांधतेहैं, यही प्रत्यक्ष मिथ्यात्वहै । जिसपरभी संसार खाताका नाम लेकर मायाचारीसे १७ वां मायामृषा पापस्थानक का सेवन करते हुए निर्दोष बनना चाहतेहैं सो कभी नहीं होसकते, आत्मार्थी सच्चे जैनीको ऐसे मिथ्यात्वका त्याग करनाही हितकारी है।

---

४२. यदि ढूंढिये साधु कहें कि तपस्याके पूर का महोत्सव आदि ऐसे हिंसाके कार्य करनेका हम नहीं कहते, यहभी मायाचारी सहित प्रत्यक्ष झूठहै, जिस प्रकार जिनमंदिर जाने वालोंको ढूंढिये साधु मनाई करदेतेहैं, सोगन दिलवा देतेहैं, उसी प्रकार यदि तपस्याकापूर-मुर्दो महोत्सव आदि ऐसी हिंसाके कार्य करनेकी ढूंढिये साधु मनाई करदें, सोगन दिलवादें तो कभी न होने पावें, यह प्रत्यक्ष प्रमाणहै कि तपस्याके पूरका दिन अपने भक्तोंको महीना १५ रोज पहिलेसेही बतला दिया जाताहै उसीसेही पत्रिका छपतीहैं, तार छुटतेहैं, मोटर घोड़ागाडी आदि स्वारीकी दोड धूम मच जातीहै, बहुत लोगोंको आये देखकर बड़ेखुसीहोतेहैं, आनेवालोंकी व भोजनभक्ति वगैरह सारसंभालकरने वालोंकी 'तुमतो बड़े भक्तहो' इत्यादि प्रसंशा करतेहैं इसीसे चौमासा आदिमें ऐसे हिंसाके कार्य होतेहैं इसलिये ऐसी हिंसा करवाने वाले मूल कारणभूत खास ढुंढिये व तेरहापंथी साधु ही हैं।

---

४३. औरभी तीन रोजका दहीमें, बहुत रोजके बाजारके चूर्णमें तथा आटा, मेदा, मसाले, कच्चीखांड, मेवा, घृतआदि अनेक वस्तुओंमें ऋतुभेदसे कालमान उपर उन्होंमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति होतीहै, ढुंढियों को ऐसी अनेक बातोंका पूरा २ ज्ञान नहींहै, जिससे ढूंढिये साधु-साध्वी श्रावक-श्राविकाएँ ऐसी वस्तु खाकर पापके भागी होतेहैं और ढूंढियोंकी पुस्तकोंमें ऐसी वस्तुओंकी काल मर्यादाका विधानभी नहींहै, इसीसेही ढूंढियोंकी अज्ञान दशासे ढुंढियोंके अनेक कर्तव्य प्रत्यक्षही सर्वज्ञ शासन विरुद्ध हैं। जिसपरभी सच्चे जैनी होनेका दावा करतेहैं और अनादि मर्यादा मुजब मोक्षके हेतु जिन प्रतिमाकी पूजा आदि सच्चे जैनियोंकी बातोंकी निंदा करके लोगोंको बहकातेहैं, यही प्रत्यक्ष मिथ्यात्वका झूठा

ढोंगहै. मोक्षकी इच्छावालेको ऐसा झूठाढोंग त्याग करनाही हितकारीहै।

४४. भगवती, ज्ञाताजी, उपासकदशा, अंतगडदशा, अनुत्तरोववाई, प्रश्नव्याकरण, उत्तराध्ययन, ओघनिर्युक्ति, प्रवचनसारोद्धार आदि बहुत शास्त्रोंमें साधुको गौचरी जाने के समय अपने पात्रोंको ढकनेके लिये झोलीके ऊपर वस्त्रके पडले रखनेका कहाहै, उससे अनेक लाभ होतेहैं, इसलिये संवेगी साधु रखतेहैं. परन्तु ढूंढिये साधु नहीं रखते जिससे अनेक नुकसान होतेहैं, सो बतलातेहैं। जब ढूंढिये साधु बाजारमें या गलियोंमें लंबी नीचे लटकती हुई खुली झोली में आहार-पानी लेकर जाते हैं तब कभी उसमें हवासे सचित्त रज गिर जातीहै १, अकस्मात वर्षाके जलकी बिंदुभी गिरजातीहैं २, कभी अधिक हवाके जोरसे अंबली, लींब, बड आदिके पत्र, पुष्प, फलवगैराभी गिरजातेहैं ३, कभी गृहस्थलोग वर्तनोंका झूंठा मैला जल अपने मकानके ऊपरसे गलीमें फैंकते होवें उससमय ढूंढिया साधु उस रास्ते होकर जाता होवे तो उसमेंसे जलके छांटे कभी आहार-पानी आदि पर गिरजातेहैं ४, कभी लोग मुर्देको ले जाते होवें तो उसकी छाया आहारादि पर गिरजातीहै ५, आकाश में चिल्ल कौवा आदि यदि उडतेहुए विष्टा करदें तो उसके छांटेभी आहारपर गिरजातेहैं ६, मणीयारे वैपारियोंकी तरह ढूंढिये साधुभी मीठाई, रोटी, शाक, दूध दही, घृत, गुड, शकर आदि आहारके सब पात्रे गृहस्थोंके घर २ में अलग २ रखदेतेहैं, उनको देखकर बालक खानेके लिये रोने लगतेहैं, न देनेपर दुःखी होतेहैं, कभी मांगनेवाले रांक देखकर लोभातेहैं न मिलनेसे अंतराय बंधताहै ८, कभी कुत्ता बिल्ली आदि खानेके लोभसे झपाटा मारदेतेहैं ९, कभी दाल, कढी, क्षीर, घृत वगैरह झोलीमें दुलजावें, झोली बिगड जावे तो रास्तामें लोग देखकर हंसी करतेहैं, उससे जैन शासनकी हिलना होतीहै १०, गरीष्ट पुष्टिकारक आहार देखकर देखो कैसा माल उडातेहैं इत्यादि निंदा होतीहै ११, निरस आहार देखकर देखो कैसा खराब आहार साधुको दिया है ऐसी देने वालोंकी निंदा होतीहै १२, वर्षा के बिंदु आदि आहार पानीमें गिरगये होवें वैसा आहार साधुको खाना कल्पता नहींहै उसको परठवना पडे उसमें अनेक तरह की जीवोंकी विराधना होतीहै १३, इत्यादि अनेक नुकसान होतेहैं इसलिये यहभी जिनाज्ञा विरुद्ध और छकायकी हिंसा

का हेतुरूप अज्ञान रिवाज ढूंढियोंको त्याग करना योग्यहै और संवेगी साधुओंकी तरह सूत्रोंकी आज्ञा मुजब झोलीके उपर पडले ढकनेका अंगीकार करनेसे गृहस्थोंके घरोंमें सब पात्रे नीचे रखनेकी जरूरत नहीं पडती उससे ऊपरके दोषोंकाभी बचाव होताहै, इसलिये झूठेहठ की अज्ञान रूढिको छोडकर सत्य बात ग्रहण करनेमेंही आत्म हितहै।

---

४५. रात्रिमें व शाम सवेर सूर्यकी गरमीके अभावमें सूक्ष्म सचित्त जलकी वर्षा हमेशा होतीहै ऐसा भगवती सूत्रके प्रथम शतकके छट्ठे उद्देशमें कहाहै इसलिये उसकी दयाके लिये साधुको तथा पौषध आदि व्रतवाले श्रावकोंको रात्रिमें व सवेर ऋतु भेदसे वर्षा कालमें छ घडी-तक, शीत कालमें ४ घडीतक, उष्ण कालमें दो घडीतक दिनचढे तब-तक और शामको उतना दिन बाकी रहे तबसे साधुको खुले अंग· मकानसे बाहिर जाना योग्य नहीं है, कभी कारण वश जाना पडेतो कंबल ओढकर जाना चाहिये. इसी कारणसे भगवतीजी, आचारांगजी, प्रश्नव्याकरण आदि सूत्रोंमें जगह २ साधु को कंबल रखनेका अधि-कार आयाहै। ढूंढियों को इस बातका पूरा २ ज्ञान नहींहै इसलिये रात्रिमें व शाम सवेर ओढनेकेलिये कंबल नहींरखते, यहभी अपकायकी हिंसाकाहेतु, त्यागकर संवेगी साधुओंकी तरह कंबल रखना योग्य है।

४६. यह कंबल रखनेका नियम सर्व तीर्थंकर महाराजोंके शासनमें सब क्षेत्रोंमें हमेशा कायम रहनेके लियेही तीर्थंकर भगवान् की दीक्षा समय इन्द्र महाराज बहु मूल्य रत्न कंबल भगवान् के डावे खंधेपर रखतेहैं यहबात जैनशास्त्रों में प्रसिद्धहीहै, इसलिये ढूंढियोंको यदि सच्चे जैनी बननेकी इच्छा हो तो अपना अज्ञान रिवाजको त्याग कर डावे खंधेपर कंबल रखने वगैरहकी सत्य बातें अंगीकार करनी योग्यहैं। दूसरी बात यहभीहै कि साधुके खंधेपर कंबली हो तो आहार आदिके लिये साधु गया होवे वहांपर रास्तामें अकस्मात जोर से हवा चलनेलगे, वर्षाहोने लगे तो शरीरको, वस्त्रको व आहार-पानी आदि को ढकनेके काममें आतीहै तथा मुंहके आगे आडी डालनेसे गौचरी बहो-रते समय या छींक आदि करते समय नाक मुंह दोनों की यत्ना होती है और बैठनेके लिये आसनके काममेंभी आतीहै अन्यभी बहुत फाय-दे होतेहैं इसलिये खंधेपर कंबल नहीं रखनेवाले अनादि कालकी शासन मर्यादाका उल्लंघन करनेके दोषी ठहरतेहैं।

॥ ॐ ॥

॥ णमो जिणाणं ॥

जाहिर उद्घोषणा नंबर ३.

(शरीरकी शुचिकेलिये रात्रिमें जल रखनेका निर्णय)

४७. ढूंढिये कहतेहैं कि सूत्रोंमें चार प्रकारका आहार साधुको रात्रिमें रखना मना कियाहै इसलिये हम लोग शरीरकी शुचिके लिये भी रात्रिको जल नहीं रखते, संवेगी साधु रखतेहैं सो सूत्र विरुद्धहै, यहभी ढूंढियोंका कथन अन समझका है, क्योंकि सूत्रोंमें अन्न-जल आदि चार प्रकारका आहार साधुको खानेके लिये संग्रह करके रात्रिको रखने की मनाई है परंतु विष्टा-पैशाबकी अशुचि से शरीर को शुचि करने के लिये जल रखनेकी मनाई किसी सूत्रमें नहींहै परंतु खास ढूंढियोंके छपवाये "निशीथ" सूत्रके चौथे उद्देशके पृष्ठ १४७-१४८ में ऐसा पाठहै;—

"जे भिक्खू उच्चार पासवणं परिट्ठवित्ता णायमई, णायमंतं वा साइज्जई ॥ १६३ ॥ जे भिक्खू उच्चार पासवणं परिट्ठवित्ता तत्थेव आय मंति, आयमंत वा साइज्जई ॥ १४६ ॥ जे भिक्खू उच्चार पासवणं परिट्ठवित्ता अइदूरे आयमइ, अइदूरे आयमंतं वा साइज्जई ॥ १६५ ॥"

अर्थः— "जो साधु-साध्वी बडीनीत लघुनीत परिठाये बाद शुचि नहीं करे, शुची नहीं करतेको अच्छा जाने (अशुचि रहनेसे असज्झाई होवे तथा प्रवचनकी हीलना होवे आदि दोषोत्पन्न होवे) ॥१६३॥ जो साधु साध्वी जिस स्थान लघुनीत बड़ीनीत परिठाई होवे उस स्थान शुचि करे आचीर्ण लेवे, लेते को अच्छा जाने (अर्थात् जरा ईधर उधर सरककर शुचि करनेसे समूर्च्छिमकी वृद्धि नहीं होवे तथा हाथ वस्त्रादिभी भरावे नहीं) ॥ १६४ ॥ जो साधु-साध्वी बडीनीत लघुनीत परिठाकर बहुत दूर जाकर शुचि करे, शुचि करते को अच्छा जाने ॥ १६५ ॥" तो प्रायश्चित्त आवे।

४८. ऊपरके सूत्रपाठमें व अर्थमें लघुनीत पैशाब और बडी नीत (ठले-जंगल) जाकर उस स्थान की शुचि न करने वालेको दोष बतलायाहै तथा उसी जगह शुचि करनेसे विष्टाके उपर जल गिरनेसे न सूखनेपर बहुत जीवोंकी उत्पत्ति होनेका दोष कहाहै और उस

जगहसे बहुत दूर जाकर शुचि करनेसे गुदाके उपर विष्टा लेपकी तरह फैल जावे, जिससे बहुत जलकी जरूरत पडे अथवा लोगोंको शंका पडजावे कि यह साधु-साध्वी जंगल जाकर शुचि नहीं करते अशुचि रहतेहैं इत्यादि दोष आतेहैं जिससे उस जगहसे उठकर दूर जाकर शुचि करनेकीभी मानई की; व थोडासा हटकर शुचिकरनेका बतलाया, इस लिये शरीर की शुचिके लिये दिनमेंभी जल रखना पडता है। अब विवेक बुद्धिसे विचार करना चाहिये कि जब दिनके लियेभी ऐसी मर्यादाहै तब यदि रात्रिमेंभी शरीरकी शुचिके लिये जल न रखे तो जंगल जाने पर शुचि नहीं कर सकते और शुचि न करें, अशुचि रहें तो सूत्रमें उसका दोष बतलाया है तथा प्रत्यक्ष व्यवहार विरुद्धहै इसलिये ऊपरके मूल सूत्रपाठकी आज्ञा मुजब शरीर शुचिके लिये रात्रिमें जल रखनेमें कोई दोष नहींहै।

४९. यदि ढूंढिये कहें कि पहिलेके साधु शरीर शुचिके लिये रात्रिमें जल नहीं रखतेथे इसालिये अबभी रखना उचित नहींहै, यहभी अनसमझकी बातहै क्योंकि पहिलेके साधु जंगलमें रहनेवाले निर्भय, निर्ममत्वी, तपस्वी, ध्यानी होतेथे, २-४ रोजमें या महीना पन्द्रह रोजमें वा जब तपस्याका पारणा होता तब तीसरे प्रहर सिर्फ एकबार गांवमें आहारके लिये आतेथे और धर्म साधनका हेतुभूत शरीरको थोडासा भाडा देने रूप अल्प आहार लेकर पीछे वन-पर्वत आदि जंगलमें चले जाते, तप और ध्यानसे उनकी जठराग्नि बहुत तीव्र होने से आहारके पुद्गल जल्दी पाचन होकर उसका बहुतसा भाग रोम व श्वासोश्वास द्वारा उड जाताथा, और आसन व योग क्रियासे उनके शरीरका वायु शुद्ध रहता उससे ऊंट बकरीकी मीगणी (लींडी) की तरह या बन्दुककी गोलीकी तरह उन महात्माओंका निर्लेप निहार कभी २ बहुत दिनोंमें होताथा, सोभी प्रथम प्रहरमें स्वाध्याय करते, दूसरे प्रहरमें ध्यान करते और जब तीसरे प्रहरमें आहार—पानी करते तब जंगल व पैशाबके कार्यसे भी निपटकर शुचि होकरके पीछे फिरभी स्वाध्याय ध्यानादि धर्मकार्योंमें, कायोत्सर्गमें लग जाते, जिससे रात्रिमें जंगल पैशाबका कभी काम नहीं पडता, जिससे ऐसे तपस्वी साधुओंको रात्रिको जल रखनेकी कुछभी जरूरत नहींथी। इसी तरहसे यदि ढूंढिये साधुभी जंगलमें रहने वाले वैसेही तपस्वी, निर्भय, निर्ममत्वी, आसन व ध्यान करने वाले, अल्प

आहारमें संतोष रखने वाले और जंगलमें हमेशा खडे रहने वाले होवें तो ढूंढिये साधुओंकोभी रात्रिमें जल रखनेकी कोई जरूरत नहीं परन्तु शहरमें गृहस्थोंके पासमें नजदीक रहकर स्वादके लोभसे दिन भरमें २-३ वार अच्छे २ पक्वान और दूध-दही-घृत-क्षीर-बडे-पकोडी-रायता आदि गरीष्ट पदार्थ अधिक खाकर १०-५ वार खूब गहरा जल पीते हुए शरीरको पुष्ट करतेहैं उससे मंदाग्नि होकर बुड्ढी भैंसकी तरह गुदा द्वार सब भरजावे वैसे लेप वाली पतली दस्त होतीहै और कभी अकस्मात रात्रिकोभी दस्त लगजातीहै तथा शीतकालमें ५—७ वार रात्रिमें पेशाब करना पडताहै, ऐसी दशामें ढूंढिये साधु अपने शरीरकी शुचिकेलिये रात्रिको जल नहींरखते, फिर पहिलेके तपस्वी साधुओंका दृष्टान्त बतलाकर अपनी अनुचित बातको पुष्ट करके निर्दोष बनतेहैं, यह कैसी भारी अज्ञानताहै। जब पहिलेके साधुओंकी तरह चलनेका दृष्टान्त बतलातेहैं तब तो उसी मुजब आचरणभी अंगीकार करने चाहियें। जिस प्रकार रांक आदमी अपने पूर्वजोंके राजऋद्धिका अभिमान करे तो उससे उसका पेट नहीं भर सकता. उसी प्रकार पहिलेके तपस्वी साधुओंका दृष्टान्त बतलाकर अभी रोजीना २—३ बार खाने वाले उन महात्माओंकी बराबरी कभी नहीं कर सकते, इसलिये पहिलेके साधुओंकी तरह रात्रिको जल न रखनेका मानलेना, हठ करना बडी भारी भूलहै।

५०. ढूंढिये कहतेहैं कि रात्रिमें जल रखनेसे कभी गर्मीके दिनोंमें तृषा लगनेपर साधु पी लेवे, इसलिये रखना योग्य नहींहै, यहभी अनसमझकी बातहै क्योंकि देखो जिसप्रकार गर्मीके दिनोंमें विहार करके दूसरे गांव जाने वाले साधुओंको बहुत तृषा लगी होवे रास्तामें नदी तलाब आदिमें जल देखनेमें आवे तोभी साधु अपना व्रत भंङ्गकरके कच्चा जल कभी नहीं पीता. उसी तरह निर्दोष आहार व प्रतिक्रमण आदि क्रिया करके भावसे शुद्ध चारित्र पालन करनेवाला साधु प्राण जावें तो भी अपना व्रत रखनेके लिये रात्रिको जल कभी नहीं पीता। दूसरी बात यहभी है कि रात्रिके जलमें चूना डालकर छाछकी आछकी तरह जलको सफेद कर दिया जाताहै, जिससे जीवोंकी उत्पत्ति नहीं होती और चूनेका खाराजल पीनेसे जबान, कंठ, कलेजा फट जाताहै इसलिये ऐसा जल कोईभी नहीं पी सकते ।

५१. ढूंढिये कहते हैं कि किसी साधुको रात्रिमें कभी उल्टी (वमन) होजावे तो जलसे मुंहकी शुद्धिकर ले, इसलिये रात्रिको जल र-

खना योग्य नहींहै, यहभी अनसमझकी बातहै. क्योंकि जिसप्रकार दिन में किसी ढूंढियेसाधुके चौविहार उपवासमें कभी उल्टीहोजावे तो १०-५ बार थूंक थूंक कर मुंह साफ कर लेताहै परन्तु मुंहमें जल नहीं डालता. इसी प्रकार साधुको रात्रिमें मुंहमें जल डालनेका त्याग होताहै उससे मुंहमें जल नहीं डालता और १०—५ बार थूंककर मुंह साफ कर लेताहै, इसलिये रात्रिमें उल्टीके समय मुंहमें जल डाले बिनाभी काम चल सकताहै और फजरमें जलसे मुंहकी शुद्धि होसकतीहै, परन्तु रात्रिमें दस्त लगनेपर विष्टासे गुदा भर जातीहै। देखो जैसे २ मुंहमेंसे थूकोगे, वैसे २ मुंह साफ होता चला जावेगा परन्तु दस्त तो जैसे २ पेटमें से निकलेगी वैसे २ गुदा खराब होती चली जावेगी जिससे वमनकी तरह दस्तमें जल बिना काम नहीं चल सकता इसलिये शरीरकी शुचि के लिये रात्रिमें जल रखनेकी खास जरूरत पडतीहै।

५२. काठीयावाड, दाक्षिण वगैरह देशोंमें फिरने वाले कोई २ ढूंढिये साधु रात्रिमें जल रखने लगगयेहैं और अन्य सब ढूंढियोंकोभी रखनेके लिये शास्त्र प्रमाण व युक्ति पूर्वक आग्रह करतेहैं। ढूंढिये साधु रीखजी 'रीखरामजी' का बनाया हुआ "सत्यार्थसागर" पुस्तकके पृष्ठ ४३८ से ४४० तकका लेख नीचे मुजबहैः—

"प्रश्नः—साधु-साध्वी लघुनीत, बडीनीत होकर शुचि न करे तो प्रायश्चित होय के नहीं ?

उत्तरः—प्रायश्चित होय 'निशीथसूत्र' के चौथे उदेशेमें कह्याहै यत पाठः– (जे भिखु उच्चार पासवणं परिठवित्ता णायमई, णयमंतं वा साइज्जई ॥) अर्थः—जो कोई साधु-साध्वी दिशा मात्रा फिरकर पाणीसे शुचि न करे तो प्रायश्चित होय. तो साधु-साध्वी रोगादि कारण विशेष जानकर शरीर शुचिके वास्ते रात्रिको राख मिलाकर पाणी शरीर शुचि के वास्ते राखे तो कोई साधुका महाव्रत नहीं जाताहै, क्योंकि वडीनीत-लघुनीतकी दुर्गंधि जहांतक होगी, तहांतक सूत्र पढना मनाईहै और प्रभात कालका प्रतिक्रमण कैसे करे और व्याख्यान सूत्रका कैसे करे, जो शुचि शरीर न होय तो असिज्झाई रहे, जब असिज्झाई सूत्रमें टालनी कहीहै. तथा कोई ऐसा कहै सूत्रमें पाणी कहां रात्रिको रखना लिखा नहीं परन्तु सूत्रोंमें कारण विशेष तो जगह जगह लिखेहैं, तो यह

कारण रोगादि तथा शरीर शक्ति हीण हो तो क्या करे, लाचारीकी बातहै तो कारणे 'बृहत्कल्प' सूत्रमें पंचमाध्ययनमें ऐसा कथनहै (नो कप्पई निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा परिया सियाए भोयण जाय जाव तप्पप्पाणमेतं वा बिंदुपमाणमेतं वा भूईपमाणमेतं वा आहार माहारितए वा णणत्थ गाढेहिं रोगायंकेहिं) इसका अर्थः— इसी पाठके शब्दोंसे जानलेना अथवा बृहत्कल्पसूत्रके टबेसे समझ लेना. इसतरह गाढे रोगादि कारण सूत्रमें निषेध नहीं और कारणे साधु वृद्ध अवस्थामें एक नगरमें रहे १, कारणे चौमासो उतर्या पीछे उसी नगरमें साधु रहे २, कारणे औषध साधु लेवे ३, कारणे साधु वहती हुई साध्वीको जलमेंसे निकाले ४, कारणे साधु चौमासामें विहार करे ५, कारणे साधु नदी उतरे ६, कारणे साधु रोग तथा शक्तिहीण और संत्थारामें लोच नहीं करे ७, कारणे साधु आहार लेवें ८, कारणे साधु न लेवे ९, कारणे साधु खाडामें पडतां वृक्षकी डाल अथवा शाख पकडके निकले १०, कारणे साधु लब्धि फोरवे ११, कारणे साधु जोतिष प्रकाशे १२, कारणे साधु बैक्रिय लब्धि करे १३, कारणे साधु एक मासकल्प उपर गांममें रहे १४, रोगादि कारणे साधु गृहस्थीके घर बैठे १५ इत्यादिक कारणे साधुको और भी बहुत कार्य करने पडतेहैं. वैसेही शरीरकी शुचिवास्ते कारणे पाणी रात्रिको साधु-साध्वी राखे तो महाव्रतमें दोषनहीं लगताहै. पाणी नहीं राखो तो निशीथ सूत्रमें दोष लिखाहै इसवास्तेही श्रीप्रवचन सारोद्धार ग्रंथमें रात्रिको पाणी शुचिके लिये रखना लिखाहै ॥ इति ॥"

५३. औरभी कनीरामजी कृत "जैनधर्म ज्ञान प्रदीप" पुस्तक भाग १, नाना दादाजी गुडने पुनामें छपवाकर प्रकट कियाहै उसके पृष्ट १५२-१५३ में चौदह स्थानककी सज्झायमें नीचे मुजब लेखहैः—

"चवदे थानकरा जीवए, ज्यांमें दुःख कह्या अतीवए, तिणरोए, तिणरो विवरो हिवे सांभलोए ॥ १ ॥ बडीनीत उच्चारए, पासवण एम विचारए, बे घडीऐ, बे घडी पछे जीव उपजेए ॥ २ ॥ आलस भय कर रातरोए, भेलोकर राखे मातरोए, इण वातरोए, निरणय हिवे तुमे सांभलोए ॥ ३ ॥ कस कस दाणा एवडाए, जंबूद्वीप जेवडाए, जेवडाए, असनीया मुवा घणाए ॥ ४ ॥ " इत्यादि

५४. ऊपरके लेखोंसे रात्रिमें जल रखने संबंधी विशेष खुलासा पाठकगण स्वयं करलेगें, मेरे अधिक लिखनेकी जरूरत नहींहै. परंतु इतनी

बात अवश्य कहूंगा कि इन लोगों का रात्रिमें जल नहीं रखना यह जिस तरह अनुचितहै, उसी तरह रखनाभी बुराहै क्योंकि वर्तमानिक इनका धोवण प्रायः जीवाकुल होताहै, उसमें राखोडी डालनेसे उन जीवोंकी हानि होतीहै और रात्रिमें अन्य जीव फिर उत्पन्न होजातेहैं, हां त्रिफलों का जल, या गरम जलमें शामको चुना आदि ते॰ वस्तु डालकर रखना चाहें तो रख सकतेहैं उसमें रात्रिमें जीव उत्पन्न न॰ीं होसकते।

५५. ढूंढिये कहतेहैं कि एक एक साधुके लिये रात्रिमें कितना कितना जल रखना चाहिये, इसका कोई वजन प्रमाण सूत्रमें नहींहै इसलिये रखना योग्य नहींहै, यहभी अनसमझकी बातहै, क्योंकि देखो जिसप्रकार दिनभरमें साधुको कितने घूंट या कितनी वार जल पीना, इस बातका वजन प्रमाण सूत्रमें नहींहै तो फिर रात्रिमें जलरखनेका वजनका प्रमाण मागना कितनी भारी भूलहै. तात्पर्य यहहै कि साधुको जितने जलसे अपनी तृषा शांत होजावे और शांतिसे धर्मसाधन हो सके, उतना जलपीना चाहिये. बस यही सूत्रकी आज्ञा है। इसी तरहसे जितने जलसे व्यवहार दृष्टिसे बाह्य शुचि होसके उतना जल रात्रिमें उपयोग पूर्वक यत्नासे रखनेकी ऊपरमें बतलाये हुए पाठके अनुसार निशीथसूत्रकी आज्ञा समझ लेनाचाहिये. इसलिये ऐसी २ कुयुक्तियों से अनुचित बातका आग्रह करके शासनकी अवज्ञाका हेतु करना उचित नहींहै।

५६. ढूंढिये कहतेहैं कि रात्रिमें जल रखने परभी कभी भूलसे अकस्मात ढुलजावे या थोडा जल होवे और दस्त बहुत लगें तो क्या करना चाहिये? ढूंढियोंके इस कथनका आशय ऐसाहै कि जल ढुलनेपर या बहुत दस्त लगने से अशुचि रहना पड़ताहै यहभी ढूंढियोंकी अनसमझकी बातहै क्योंकि देखो हजारों ढूंढिये साधु-साध्वी और संवेगी साधु-साध्वी हमेशा रोजीना आहार पानी लातेहैं परंतु सब ढुलकर सब पात्रे खाली होगये वैसा आजतक देखनेमें और सुननेमें कभी नहीं आया हां इतनी बात जरूरहै कि कभी भूलसे कोई वस्तु ढुल जावे तो कुछ ढुलतीहै और कुछ बाकी रहतीभीहै, यह प्रत्यक्ष प्रमाणहै और जिसप्रकार दिनमें जितने आहार पानीकी साधुको जरूरत हो उतना ले आताहै, उसी प्रकार यदि रोगादि कारण से बहुत दस्त लगनेकी संभावना हो तो रात्रिके लिये अधिक जल रखलेताहै, इसलिये ढुलजाने

का या बहुत दस्तहोनेका बहाना बतलाकर हमेशा सर्वथा जल नहीं रखनेका या अशुचि रहनेका ठहराना बड़ी अज्ञानता है।

५७. फिरभी देखिये— ढूंढियोंमें किसी श्रावक या श्राविकाने दीक्षा ली होवे परंतु कर्मगतिसे साधुपनेसे पीछे भ्रष्ट हो जावें उनको देखकर कोईभी दूसरे दीक्षा न लें, यह नहीं होसकता तथा किसी गृहस्थने द्रव्यप्राप्तिकी इच्छासे व्यापार किया परंतु अकस्मात घाटा लग गया तो उसको देखकर सबलोग व्यापार करना नहीं छोड सकते. इसी तरहसे कभी अकस्मात किसी साधुके सब जल ढुल जानेका किसी तरहसे मान लिया जावे तोभी उसको देखकर सब ढूंढिये साधु हमेशा रात्रिको कभी जल न रखें और दस्त लगनेपर जान बुझकर अशुचि रहें यह कितनी भारी अज्ञानताहै तथा यह बात सबके अनुभव कीहै कि रोगादि कारणसे किसी साधुको बहुत दस्त होजावे, वस्त्र या शरीर भरजावे, उठनेकी शक्ति न होवे तो दूसरे साधु उसके वस्त्र व शरीरकी शुचिकी व्यवस्था करतेहैं। इसी तरह ढूंढिये साधुओंको रात्रिमें दस्त होने पर उनकी शुचिके लिये फजरमें जल लाकर शुचि-करवानेकी दूसरे साधु व्यवस्था नहीं करते इसलिये बहुत दस्त होने का बहाना बतलाकर रात्रिको सर्वथा जल नहीं रखनेका ठहराना अनुचितहै।

५८. ढूंढिये कहतेहैं कि "ठाणांग" सूत्रके पांचवें ठाणेके३ उद्देशमें पांच प्रकारकी शुचि लिखीहै उस मुजब हमको जब रात्रिमें दस्तलगें तब शुचि करलेतेहैं, यहभी कपट क्रियाहै क्योंकि वहांपर मट्टी, जल, अग्नि व मंत्रसे चार प्रकार की बाह्य और ब्रह्मचर्यसे पांचवी अंतर शुचि कहीहै। अब विचार करना चाहिये कि अग्नि, मंत्र व ब्रह्मचर्यसे दस्त होने पर गुदा की शुचि नहीं होती यह प्रसिद्ध बात है तथा जो मट्टीसे शुचि करनेका लिखाहै सोभी गृहस्थलोग वर्तनोंको मांजकर साफ करतेहैं व दुर्गंधकी जगह रगड़तेहैं इस अपेक्षासे व्यवहारकी बात बतलायीहै इससे दस्त होने पर अकेली मट्टीसे गुदाकी शुचि नहीं होसकती. देखो मारवाड़ आदिमें बालकलोग खेलनेके लिये बाहर जाते हैं वहांपर जंगल होकर धूलमें गांड घिसणी करतेहैं उससे पूरी सफाई नहीं होती जिससे फिर घरमें आकर जलसे धोतेहैं परंतु साधु को वैसा करना योग्यनहीं है और ढूंढिये साधु रात्रिमें जल रखते नहीं

इसलिये रात्रिमें जलसे भी शुचि नहीं करते, जिसपरभी ठाणांग सूत्रके नामसे शुचि करनेका ठहराना यहतो प्रत्यक्षही भोले जीवोंको बहकाकर अपनी भूलका बचाव करनेकी प्रपंच बाजीहै।

५९. ढूंढिये कहते हैं कि बृहत्कल्प सूत्र में और व्यवहार सूत्रमें मूत्र लेनेका लिखाहै, इसलिये हमभी कभी काम पडजावे तो उससे अपना काम कर लेतेहैं यहभी बडी भूलहै. क्योंकि देखो जिसतरह किसी एक ब्राह्मण—बनियेको मरणांत कष्टवाले बडेभारी रोगके महान्कारण विशेषसे किसी तर्क बुद्धिवाले अनुभवी वैद्यने किसी तरहकी कोई अपवित्र वस्तुकी दवाई देकर उस समय उसका जीव बचालिया तो उसकी देखादेखी निरोग अवस्थामें वह ब्राह्मण, बनीया या उनकी सर्व जातवाले उस अपवित्र वस्तुको हमेशाके लिये अपने काममें कभी नहीं लासकते तथा यह बाततो अभी प्रसिद्धहीहै कि कई डाक्टर सर्प काटने वगैरहके जहर उतारनेके लिये रोगीको दवाई रूपमें मूत्र पीलातेहैं परंतु उनकी तरह सर्व मनुष्य मूत्र पीनेवाले नहीं बन सकते और उससे मूत्रको पवित्रभी कभी नहीं मान सकते। इसी तरहसे सर्प आदिके काटने के जहर वगैरह मरणांत कष्टवाले महान् कारण विशेष से साधुका जीव बचानेके लिये वैद्यकी सलाहसे दवाई रूपमें मूत्र लेनेका काम पडे तो ले सकतेहैं इसलिये बृहत्कल्प सूत्रमें एसे गाढे कारण से लिखाहै जिसपर भी कितनेहीं ढूंढिये व तेरहापंथी लोग इस बात का भावार्थ समझे बिना निरोग अवस्थामें रात्रिको शरीर शुचिके लिये जल न रखकर मूत्रको शुद्ध समझकर दस्त लगनेपर मूत्रसे व्यवहार करतेहैं यही उनकी बड़ी अनसमझकी निर्विवेकताहै।

६० यदि कोई कहे कि हमारे भी कभी रात्रिमें अकस्मात दस्त होनेका महान् कारण होजावे तो मूत्रका उपयोग करलें तो उसमें कोई दोष नहींहै, यहभी बड़ी भूलहै क्योंकि दिनभरमें दो तीन बार खूब पेट भरके रोटी-शाक और मीष्टान वगैरह खाने वालेको रात्रिमें दस्त लगना यह महान्कारण नहीं किंतु स्वाभाविक नियमकी बातहै इसलिये एसे पेटभरने वाले ढूंढिये; तेरहापंथी साधु-साध्वियोंको रात्रिमें शरीर की शुचिकेलिये जल रखनेकी खास आवश्यकताहै जिसपरभी जान बुझकर रखते नहीं और कितनेक रात्रिमें दस्त होनेका महान्कारण मानकर मूत्रका व्यवहार करलेतेहैं यह सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्ध, जैनशास्त्र विरुद्ध

और जगतके व्यवहारकेभी प्रत्यक्ष विरुद्धहै. जैनशास्त्रों में मूत्रको किसी जगह पवित्र नहीं लिखा और शरीरकी शुचिके लिये लेनेकी आज्ञाभी नहीं लिखी इसलिये बृहत्कल्प आदि जैन शास्त्रोंके नामसे ऐसा अनुचित व निंदनीय व्यवहार किसीभी समझदार को करना योग्य नहींहै।

६१. इसीतरहसे ढूंढिये व तेरहापंथी श्रावक-श्राविकाभी रात्रि के पौषध व्रतमें या दया पालन करने के रोज मीठाइयें खाकरके अपने गुरुओंकी तरह संवरमें रात्रिको जल नहीं रखते और कभी किसीके दस्तका कारण बनजावे तो अनुचित व्यवहार करलेतेहैं, यह धर्म नहीं है किंतु मलीन बुद्धिकी बडी अज्ञानतासे समाजकी निन्दारूप महान् अधर्म करतेहैं। ऐसे अधर्मको त्याग करनाही हितकारीहै।

६२. आगरे वाले ढूंढियोंकी 'साधुमार्गी जैन उद्योनिती सभा' ने "साधु गुण परीक्षा" नामक छोटीसी किताबमें ढूंढिये साधुओंको रात्रिमें जल न रखनेकी पुष्टिके लिये पृष्ठ १९-२० में एक दृष्टांत लिखा है, वहभी पाठक गणको यहां बतलातेहैं :—

"एक ब्राह्मण एक जंगलमें जा रहाहै उसके पास इस समय शास्त्र मूर्त्ति और भोजनकी सामग्रीहै साथमें परिवारि जन नहींहैं उस को उसी समय शौचकी इच्छा हुई, परंतु जलका अभाव और आगेको नहीं चल सकता ऐसे समयमें उसका क्या कर्त्तव्य हो सकताहै? केवल यही कि वह इस जंगलमें बैठ शौच निवृत्ति करले, शौच होकर, बताइये वह मूर्त्ति शास्त्र और भोजन सामग्रीको साथ ले जायगा या नहीं!, नहीं२ वह अपने मूर्त्ति और शास्त्रको नहीं छोड सकताहै। बस हमारे साधुओंकोभी वह रात्रि उस जंगल तादृशहीहै। वे यदि ऐसे समय वस्त्र या रेत अथवा किसी अन्य प्रकार शुद्धि कर लें तो उसमें कोई निन्दास्पद बात नहींहै" यह ढूंढियों का लिखना कितना भारी अनुचितहै।

६३. देखो उपर मुजब कभी किसी ब्राह्मणको वैसा कारण बन जावे तो गांवमें गये बाद शुचि होकर पूजा-प्रतिष्ठा-दान-जप आदि करके उसका प्रायाश्चित्त करले, इसी तरह ढुंढियोंको रात्रिमें दस्त लगने पर कोईभी ढूंढिया उसका प्रायाश्चित्त नहीं लेता और उस प्रायाश्चितकी विधिभी ढूंढियोंके शास्त्रोंमें नहींहै। तथा एक ब्राह्मणको ऐसा कारण

कभी बन जावे तो उसकी तरह सब ब्राह्मण समाज हमेशाही जलबिना शौच करनेका कभी स्वीकार नहीं कर सकता और अटवी, युद्ध, दुष्काल वगैरह आफत कालमें किसीने अपने प्राण बचाने के लिये मरेहुए मनुष्यका मांस खाकर व खून पीकर अपना जी बचालिया वा किसीने कुत्ते, कौवे आदिको खा लिये तो उनकी तरह सब लोग मनुष्योंको खानेवाले नहीं बन सकते, इसलिये ऐसा कल्पित एक ब्राह्मण का दृष्टांत बतला कर ढूंढिये सामाजके सर्व साधुओंको निसुग बना कर रात्रिमें जल रखने का हमेशाके लिये निषेध करना बड़ीभूलहै।

६४. फिरभी देखिये उपर के दृष्टांत में बतलाये मुजब ब्राह्मणको कभी एकबार ऐसा अनुचित काम पडजावे तो फिर जन्मभर ऐसे जंगलके रास्ते अपने साथमें जललिये बिना कभी न जावे परंतु सैकडों ढूंढिये साधु साध्वियों को रात्रिमें दस्त होनेका हजारों बार काम पड चुकाहै व पडताभी है जिसपरभी ऐसा दृष्टांत बतला कर रात्रिमें जल रखनेका निषेध करना यही बडी अनसमझहै और ऊपरके दृष्टांत मुजब ढूंढिये बिना जल दस्तहोने पर अपना काम चलानेका मान्य करते हैं जिससे उस ब्राह्मणकी तरह जंगल जाकर कपडे से पूंछकर या बालकों की तरह रेतीमें गांड घिसणी करके जलसे शुचिकिये बिनाही अपने धर्मशास्त्रोंको हाथमें लेनेका ऊपरके दृष्टांत मुजब ढूंढिये मान्य करतेहैं, इसी तरहसे कितनेक विहार करके दूसरे गांव जाते समय रास्तामें दस्तलग जावे तो वहांही जंगल जाकर जलसे शुचि किये बिनाही पुस्तक आदिको हाथ लगालेतेहैं फिर गांवमें जाकर भक्त लोगोंको धर्मका उपदेश देने लगतेहैं और घर २ में आहार-पाणीके लिये फिरते हैं परंतु दस्तकी अशुचिकी जलसे शुचि करतेनहीं, यह कितनी भारी अनुचित प्रवृत्तिहै, ऐसे अनुचित व्यवहारका त्याग करनाही श्रेय कारीहै।

(रात्रिमें जल न रखनेमें २१ दोषोंकी प्राप्ति)

६५. देखो रात्रिमें जल न रखनेसे दस्त लगनेपर अशुचि रहती है १, कभी कोई अशुचिके भयसे दस्त को दबाकर रोकलेवे तो रोगकी उत्पत्ति होतीहै २, दस्तकी व्याकुलतासे फजर होनेकी राह देखतेहुए सूर्योदय होतेही गृहस्थोंके घरमें जलके लिये भगना पडताहै ३, कभी किसी अकेली स्त्रीके घरमेंसे साधुको सूर्योदय होतेही जल लेकर निकलता देखकर किसी को रात्रिमें वहां रहनेकी शंका पडजावे ४, ऐसा

देखकर कभी कोई साधुका उडाह करे उससे लोगोंके कर्म बंधे ५ दूसरे साधुओं परभी अप्रीति होवे ६, सूर्यका उदयहोनेके समय गृहस्थोंके घरोंमें बहु, बैन, बेटी आदि सोते पडे होवे उस समय साधुको गृहस्थों के घरोंमें जानेकी मनाई है, तोभी दस्तकी हाजतसे जलके लिये लाचारी से ऐसे समय गृहस्थोंके घरोमें फिरना पडताहै, ७, सूर्योदयके समय बहुत श्रावक-श्राविका सामायिक-प्रतिक्रमण आदि अपने २ नित्य कर्तव्यमें बैठे होवें, उस समय साधु घरमें आकर खाली जावे तो उन गृहस्थोंको देखो 'आज हमारे घरमें साधुजी आये परंतु जल मिला नहीं, खाली पीछे चलेगये' इत्यादि पश्चाताप करना पडताहै ८, सूर्योदय होतेही लोगोंने झाडु बुहारा भी निकाला न होवे, शुचि कर्ममें लगे होवें, गृहकार्य को हाथही लगाया नहीं होवे उस समय गृहस्थोंके घरोंमें जानेसे निर्दोष शुद्ध जल साधुको मिलना बडा मुश्किल होता है ९, चुल्हेपर रात्रिको रखाहुवा जल लेनेसे वह जल प्रायः कच्चा सचित्त जल होताहै उसका खुलासा पहिले लिख आयाहूं; इसलिये रात्रिवासी चुल्हेपरका कच्चा जल लेनेका दोष आताहै १०, कोई भक्त श्राविका आदि सूर्यउदय होने पहिले जल्दी से अंधेरेमें धोवण वगैरह करके रख छोडे वह जल लेनेसे साधुको आधाकर्मी और स्थापना दोष लगताहै ११, जोरसे दस्तकी हाजत होनेपर फजर में प्रतिक्रमण, प्रतिलेखनादि कार्य चित्तकी अशांतिसे शुद्ध नहींहोसकते १२, कभीप्रहर भर या थोडीसी रात्रि जानेपर दस्त लगजावे तो संपूर्ण रात्रितक विष्टा लिप्त शरीर रहताहै, वस्त्र खराब होतेहैं बडी विडंबना होतीहै १३, कभी वर्षा चौमासेमें सूर्यउदय होतेही वर्षा शुरू होजावे तब गृहस्थोंके घरमें जलके लिये जाना कल्पे नहीं उधर दस्तकी जोरसे हाजत होवे तो बडी तकलीफ भोगनी पडतीहै १४, कभी वर्षाकालमें रात्रिको दस्तलग जावे सूर्योदय होतेही वर्षा वर्षने लगे, या १-२ रोजकी झरी लगजावे उस समय फजरमें गृहस्थोंके घर जाकर जल लाकर शुचि कर सकते नहीं और अशुचि रहनेसे प्रतिक्रमण-स्वाध्याय करना सूत्र के पानोंको छूना, हाथमें लेने, व्याख्यान बांचना, गृहस्थोंको व्रतपच्चक्खान करवाने वगैरहमें शास्त्रपाठका उच्चारण करना कल्पे नहीं १५ जिसपरभी यदि अशुचि शरीर होनेपरभी सूत्र वाक्य उच्चारण करे तो ज्ञानावर्णीय कर्म बांधे १६, और "पन्नवणा" सूत्रके प्रथमपदके पाठके अनुसार तथा १४

स्थानककी ऊपरमें बतलायी हुई सज्झायकी गाथाओंके अनुसार यदि कोई रात्रिमें आलस्य, भय या दस्तकी शुचिके लिये मात्राको इकट्ठा करके रक्खे तो उससे असंख्य संमूर्छिम पंचेंद्रीय मनुष्योंकी घात होनेका दोष लगे ॥१७॥

यदि कोई कहेगा कि रात्रिमें दस्त लगनेपर पत्थरके टुकडेसे या कपडेके टुकडेसे पूंछकर साफ कर लेवे तो अशुचि न रहेगी, यहभी अनुचितहै क्योंकि पत्थरके टुकडेसे कृमी आदिजीवोंकी हानिहोवे, कभी अंधेरेमें हाथ भरजावे, गुदाभी पूरी २ साफ नहींहोती, विष्टालगी रहती है तथा पत्थरका टुकडा, काष्टका टुकडा, वांसकी शलाका आदि रात्रिके समय अंधेरेमें लेनेसे त्रस-स्थावर जीवोंकी हानिहोवे और कभी सर्प, विच्छु वगैरह जहरी जीव काट खावें तो संयम विराधना व आत्म विराधना होजावे इत्यादि अनेक दोष आतेहैं इसलिये पत्थर काष्टादिसे पूंछकर साफ करना सर्वथा सूत्र विरुद्ध और लोक विरुद्ध भी है ॥ १८॥

यदि कोई कहेगा कि हमलोग अल्प आहार करेंगे और शाम सवेर दोनों बार जंगल जाया करेंगे, उससे हमको रात्रिमें जंगल जानेकी व जल रखनेकी जरुरत नहीं पडेगी, यहभी अनसमजकी बातहै, क्योंकि हमेशा अल्प आहार करके संतोष रखने वाले सैकडे १-२ साधु साध्वी निकलेंगे किंतु सब अल्प आहार करनेवाले नहींहैं, खूब गहरा पेट भरने वाले बहुतहैं। तथा शामको जंगल जानेकी आदत रखने वालोंको प्रतिलेखना करनेमें, गौचरी जानेमें, आहार करनेमें, पढने-गुणनेमें, स्वाध्याय-ध्यानादि धर्मकार्य करनेमें बाधा आतीहै, अंतराय पडतीहै, जिससे यह रीतिभी सर्वथा अनुचितहै। और वर्षा काल में शाम-सवेर दोनों बार नियम पूर्वक जंगल जानेका नहीं बन सकता, कभी वर्षाके कारणसे शामको जंगल नहीं जासके तो उसको रात्रिमें जंगल जानेकी बाधा अवश्य होगी, इसलिये हमेशाके लिये सर्व साधु-साध्वियोंको रात्रिमें जल रखनेका निषेध करना व नहीं रखनेका हठ करना यह प्रत्यक्षही बडीभूल है ॥ १९ ॥

रात्रिमें सब साधु-साध्वियोंको बहुत बार पैशाब करना पडताहै, निशीथसूत्रके ऊपरमें बतलाये हुए पाठमें जंगल व पैशाब दोनोंकी शुचि करनेका लिखाहै, रात्रिमें जल नहीं रखनेवाले पैशाबकी शुचि नहीं करसकते, जान बुझकर हमेशा पैशाबकी अशुचि रखतेहैं, और पहीरनेके

वस्त्रमें पैशाबके छांटे लगकर वस्त्र गीला रहने परभी 'सूत्र' पढतेहैं यह सब कार्य सूत्र विरुद्ध होनेसे प्रत्यक्ष दोष लगताहै और ज्ञानावर्णीय बड़ेभारी कर्म बंधनहोतेहैं ॥ २० ॥

यदि कोई कहेगा कि पैशाबसे गुदा धोकर शुचि कर लेगें तो फिर अशुचि न रहेगी, यहभी सर्वथा अनुचितहै क्योंकि विष्टाकी तरह पैशाबभी अशुचिहै जिससे निशीथ सूत्रमें जलसे पैशाबकी शुचि करनेका लिखाहै इसलिये पैशाबसे गुदाकी शुचि करने वाले या शुचि करनेका मानने वाले सब दोषके भागी हो कर प्रत्यक्ष अशुचि रहतेहैं और समाजकी अवज्ञा करवाने रूप जिनाज्ञाकी विराधना करते हुए लोगोंके व निजके मिथ्यात्वका हेतु भूत दुर्लभ बोधिका कारण बनतेहैं ॥ २१ ॥ इत्यादि अनेक दोषोंसे छुटनेका सरल उपाय तो यहीहै कि खूब तपस्या करो और तपस्याके पारणेमें भी सिर्फ दिनभरमें एकवार लूखा सूखा थोडा आहार व थोडा जल पीकर संतोष रखलो, उससे जटरा अग्नि बहुत तीव्र रहेगी, मंदाग्निका कोई रोग न होगा, तथा शामतक १-२ वार पैशाबभी हो जावेगा, दिनमेंही जंगल जाकर सब निपटलो और रात्रिमें ध्यानमें खडे रहो, उससे रात्रिभर जंगल व पैशाब कुछभी न आवेगा, जिससे रात्रिमें जल रखनेकी भी जरुरत न रहेगी, परंतु स्वादके लिये, पुष्टिके लिये दिनभरमें २-३ बार माल मसाले मीठाई आदि खावोगे; ५-१० वार खूब जल पीवोगे फिर रात्रिमें जल रखनेका, इनकार करोगे यह कभी नहीं बन सकता, इस बातको विशेष तत्त्वज्ञ पाठक गण आपही विचार सकतेहैं ।

(झूठे हठको छोड़ो व्यर्थ निंदा मत करावो)

६६. प्रिय पाठकगण ढूंढिये व तेरहापंथी साधु रात्रिमें जल नहीं रखते फजरमें सूर्यका उदय होतेही जंगलके लिये जातेहैं तब यद्यपि कभी जल लेकर जाते होवें तोभी लोगोंमें शंकास्पद ऐसी बात फैली हुईहै कि सायत् पैशाब लेकर जाते होंगे या लोक दिखाउ खाली पात्र को ढककर ले जाते होंगे और वहांपर कदाचित पैशाबसे शुचिकरते होंगे ऐसी अफवाह फैली हुई होनेसे मुसलमान वगैरह कभी कोई ढूंढिया वा तेरहापंथी साधु जंगल बैठा हो वहां पत्थर फैकतेहैं, कोई गुप्तपने पहिलेसेही दूरके झाडपर चढकर चेष्टा देखते रहतेहैं फिर पिछाडीसे निंदा करतेहैं और पंजाब, मारवाड़, मेवाड, दक्षिण, बराड देशमें अमरावती

वगैरह बहुतजगह रात्रिजल न रखने व पैशाबसे व्यवहारकरने बाबत विवाद चल चुकाहै, निंदास्पद लज्जनीय झगडा भी होचुकाहै, हेंडबिलें, विज्ञापनें, तथा किताबेंभी छपीहैं, विरोधभाव कलेशसे हजारों रुपिये भी खर्च होचुके व होतेभीहैं, इत्यादि व्यर्थ निंदा-झगडा होकर लोगोंके कर्म बंधन होतेहैं, ढूंढिये व तेरहपंथी समाजकी हिलना, अवज्ञा व भ्रष्टताका आरोप वगैरह अनेक अनर्थ हुएहैं व होतेभीहैं इसलिये ढूंढिये व तेरहा-पंथी सर्व साधु-साध्वियोंको मेरा खास आग्रह पूर्वक यही कहनाहै कि रात्रिमें साधुको जल पीनेके लिये रखनेकी मनाईहै परंतु शरीरकी शुचिके लिये रखने की मनाई किसी सूत्रमें नहींहै इसलिये झूठे हठको त्याग करके रात्रिमें जल रखनेका शुरुकरके उपर मुजब अनेक अनर्थों की जडकोही उखाड डालना उचितहै।

---

६७. ढूंढिये लोग ऊपर मुजब अपने अनेक दोषोंको छुपानेके लिये प्रतिक्रमण सूत्रके नामसे संवेगियोंपर मूत पीनेका आरोप रखते हैं, यहभी प्रत्यक्ष झूंठहै क्योंकि देखो-'प्रतिक्रमण' सूत्रमें पच्चक्खाण भाष्यकी इस प्रकार की गाथाहैः—

"असणे मुग्गोयण सत्तु, मंड पय खज्ज रब्ब कंदाइ ॥ पाणे कंजिय जव कयर, कक्कडोदग सुराइ जलं ॥१४॥ खाइमे भत्तोस फलाइ, साइमे सुंठि जीर अजमाई ॥ महु गुड तंबोलाइ, अणाहारे मोय निंबाई ॥१५॥ दारं ॥ ३ ॥"

६८. इन दो गाथाओंमें असनं, पानं, खाइमं, साइमं व अनाहार वस्तुओंका स्वरूप बतलायाहै, उसमें सर्व प्रकार के अनाज (धान्य) मीठाई, दूध, दही, घृत, तेल, मक्खण व 'कंदाइ' कहनेसे आलू, कांदे, सुरणकंद, गाजर, मूले, शकरकंद, इत्यादि इन से पेट भरताहै, क्षुधा शांत होती है, जिस से यह सब अशनमें गिनेहैं। नदी, तलाब, समुद्र व कांजीका जल, छाछकी आछ, यव-केर-द्राक्ष आदिका धोवण तथा मदिरा, ताडी वगैरह पीनेके काममें आतेहैं, जिससे पानी में गिनेहैं। आंब, केले, शीताफल आदि फल व द्राक्षादि मेवा, खांड, शकर, खजूर वगैरह अनाजसे थोडी क्षुधाशांत करनेवाले होनेसे खादिममें गिनेहैं। सुंठ, जीरा अजमान, पीपर, काली मीरच, पीपरामूल, इलाइची, लौंग आदि मुखवासकी वस्तु स्वादिममें गिनीहैं। यह चार प्रकारकी सब वस्तु आहार में गिनने में आती हैं। और अनाहार में गौमूत्रादि पेशाब,

लींबके पत्ते-सली व आदि शब्दसे त्रिफला, कडु, किरायता, लींब गीलोय, धमासो, कथेरमूल, केरडेके मूल, चित्रक, खेरसार, चंदन, चोपचीनी, रीगणी, रोहिणी, अफीम- संखीया आदि सब तरह के जहर, भस्मी (राख,) चुना, गुगल, अतिविष, पलिओ, कुआरपाठा, थोयर, आक, फटकड़ी इत्यादि यह सब अनाहार वस्तुओंके नाम बतलायेहैं।

६९. इसी प्रकार जैनतत्वादर्श, श्राद्धविधि, प्रकरणमाला आदि में आहार व अनाहार की वस्तुओं के बहुत भेद बतलायेहैं। आहार की वस्तु लोगों के खाने पीने में आती हैं और स्वाद रहित अनाहार की वस्तु कभी रोगादिमें काम आतीहैं। आहार करनेका त्याग करने वालों को कभी रोगादि कारण से अनाहार वस्तु लेनी पडेतो आहार त्याग रूप व्रत भंगका दोष नहीं आता। अब विवेक बुद्धिसे विचार करना चाहिये कि ऊपरकी सब वस्तु साधु श्रावकके-खाने-पीनेके काममें कभी नहीं आती किन्तु जो वस्तु जिसके योग्य होवे वोही वस्तु ग्रहण कर सकेगा परंतु सब नहीं। जैसे जलके भेदोंमें समुद्रका जल व शराब (दारू) ताडी आदि का नाम बतलायाहै और साधु-श्रावक जलको सब कोई पीतेहैं, परन्तु समुद्रका खारा जल व दारू और ताडी कोईभी साधु-श्रावक कभी नहीं पीसकता, जिसपरभी कोई अनसमझ ऊपर के लेख में दारू व ताडी का नाम देखकर सब साधु श्रावकों को दारू पीने वाले मान ले तो उनकी बडी भारी अज्ञान दशाकी द्वेष बुद्धि व कुटिलता समझनी चाहिये। वैसेही अनाहार वस्तुमें राख, आक, पैशाब, थोयर, सब तरहके विष आदि के नाम बतलायेहैं, यहसब किसी भी साधु-श्रावकके रात्रिमें व दिनमें खाने पीने के काममें कभीनहीं आते यह प्रत्यक्ष अनुभव सिद्ध जग जाहिर बातहै। जिसपरभी ढूंढिये लोग प्रत्यक्ष द्वेष बुद्धिसे संवेगी साधुओंको पैशाब पीनेका झूठा कलंक लगातेहैं यह कितना भारी अधर्म है। देखो-जिसप्रकार राजा, बादशाह के राज्याभिषेक व विवाहशादी वगैरहके महोत्सवमें राजा बादशाहने मांस, मदिरा, मीठाई वगैरह सब तरहकी भोजनकी सामग्री तैयार करवाकर सब शहरके ब्राह्मण, बनिये, क्षत्रीय, मुसलमान आदि सब जातियोंको जीमनेका आमंत्रण देकर जिमाये, ऐसा किसी जगह का सामान्य लेख देखकर बनीये-ब्राह्मण आदि सब जातिवालोंको मांस-मदिरा

खाने-पीनेवाले कभी नहीं ठहरा सकते, किंतु जैसा जिसके योग्य होवे वो वैसा भोजन करे, इसी तरह से अनाहार की वस्तुओंके सामान्य नाम देखकर 'जैसी जिसके लेने योग्य होवे वो वैसी वस्तु ले सकताहै' ऐसे स्पष्ट भावार्थको समझे बिना द्वेषबुद्धिसे संवेगी साधुओं पर पैशाब पीनेका प्रत्यक्ष झूठा कलंक लगाना यही बडा भारी पाप है।

(ढूंढियोंका कपट और द्वेषबुद्धिका प्रत्यक्ष नमूना देखो)

७०. प्रिय! पाठक गण देखो ऊपर मुजब आहार पानी आदि आगे पीछेके संबंध वाली सब बातोंको प्रत्यक्ष कपट से छोडकर पैशाब की अधूरी बातका उल्टा भावार्थ लाकर भोले लोगोंको कैसे भ्रममें डालेहैं। आज तक किसीभी संवेगी साधुने रात में व दिनमें कभी पैशाब पीया नहीं और पीनेका किसी ग्रंथमें लिखा भी नहीं परंतु ढूंढिये लोग गुरुका मुर्दा जलाकर स्नान करते नहीं तथा हमेशा गरीष्ट वस्तु खाने वाले साधु-साध्वी और दयापालन करने के रोज माल उडाने वाले श्रावक-श्राविका अपने शरीरकी शुचिके लिये रात्रिमें जल रखते नहीं, रजस्वला, और सूतक की पूरी मर्यादा साचवते नहीं इत्यादि अनेक लोक विरुद्ध अनुचित कार्य करके ढूंढिये अपने सामाजकी बडी निंदा करवातेहैं, लोगोंके कर्म बंधनका हेतु करतेहैं जिससे संवेगी लोग ढूंढियों को समझाते हैं कि ऐसे अनुचित कार्य मत करो उसपर ढूंढिये लोग अपनी भूलोंको सुधारते नहीं और अपने दोषोंको छुपानेके लिये संवेगी साधुओंके ऊपर प्रत्यक्ष झूठा पैशाब पीनेका कलंक लगाकर जैन समाज का द्रोह करतेहैं, बडी निंदा करवातेहैं, राग द्वेष के झगडे फैलातेहैं, यह कितनी बडी द्वेष बुद्धि व प्रबल मिथ्यात्वहै इस बातका विशेष विचार पाठक गण स्वयं कर सकते हैं।

७१. फिरभी देखिये- किसी एक ब्राह्मणने अपने बनाये वैद्यक ग्रंथमें मूत्रके गुण लिखकर किसी रोगमें मूत्र लेनेका लिख दिया होवे तो उससे वह ब्राह्मण या उनकी वंश परंपरावाले मूत्र पीनेवाले कभी नहीं माने जा सकते, जिसपरभी उनको मूत्रपीनेका दोष लगाने वाला मिथ्याभाषी ठहरताहै। उसी प्रकार 'पच्चक्खाण भाष्य' में अनाहार वस्तु के स्वरूपमें गौमूत्रादि पैशाब को भी अनाहार में लिख दिया है, उससे ग्रंथ बनाने वाले या उनकी परंपरावाले साधु पैशाब पीने वाले कभी नहीं ठहर सकते जिसपरभी ढूंढिये लोग उपर मुजब अपने दोष छुपाने

के लिये द्वेष बुद्धि से संवेगी साधुओंको पेशाब पीनेका दोष लगातेहैं यह प्रत्यक्ष झूंठ बोलकर महान् पापके भागीहोतेहैं और सरकारी फोजदारीके कायदे मुजबभी ऐसा झूठा दोष लगाकर बदनामी करके मान हानिं करने वाले सब ढूंढिये दंडके भागी ठहरतेहैं इसलिये किसीभी ढूंढियाको ऐसा झूठा आरोप लगाकर अनर्थ के भागी होना योग्य नहींहै।

[रजस्वला और सूतकका खुलासा]

७२. ढूंढिये व तेरहापंथियोंकी श्राविकाएँ रजस्वला (ऋतुप्राप्ति) के ३ दिनोंमें अपने कुटुंबके लिये रसोई बनातीहैं, दलना, पीसना, चखसीना, गउदोना वगैरह बहुत प्रकारके गृह कार्य करती हैं तथा उनकी साध्वियेंभी रजस्वला धर्ममें धर्मशास्त्रोंको हाथ लगाना, श्राविकाओंका संसर्ग करना, घर २ में गौचरी को फिरना, व्रत पच्चक्खाण व मंगलिक का शास्त्र पाठ उच्चारण करना इत्यादि किसी तरहका परहेज नहीं रखती यह सब प्रत्यक्ष अनुचित व्यवहारहै। [इसलिये रजस्वलामें पूरे ३ रोज (२४ प्रहर) तक ऊपर मुजब कार्य करने योग्य नहीं हैं]। उससे उत्तम कुलकी व उत्तम धर्मकी पुण्याई में हानि, बुद्धि-मतिकी मलीनता, भ्रष्टाचारका आरोप व लोगों में निंदा इत्यादि धार्मिक शास्त्रोंकी दृष्टिसे, व्यवहारिक दृष्टिसे, उत्तम कुलकी मर्यादाकी दृष्टिसे व शारीरिक दृष्टिसेभी अनेक तरहके नुकसान होते हैं इसलिये इस बातकी तीन रोजतक पूरी २ मर्यादा का पालन करना उचितहै।

७३. कितनेही कहतेहैं कि शरीर में किसी जगह गुंबड होकर खून निकलने लगे तो उसका परहेज नहीं रखा जाता, उसी तरह स्त्रीके रजस्वला में भी गुंबडेकी तरह खून निकलताहै, उसका भी परहेज रखना नहीं चाहिये. यहभी अनसमझकी बातहै क्योंकि गुंबडातो बाल वृद्ध सब मनुष्योंके होसकताहै बहुत लोगोंके कभीभी नहीं होता इस का कोई नियम नहींहै और रजस्वलातो उमर योग्य स्त्रियोंके महीने २ अवश्य होताहै तथा गुंबडे वालेकी किसी रोगी मनुष्यपर छाया पडेतो कुछभी नुकसान नहीं होता परंतु रजस्वला स्त्रीकी छाया यदि बडी-पापड आदि पर गिरजावे तो लावण लगकर खराब होजातेहैं और शीतला, मोतीझरा या आंखकी बीमारी वाले रोगी पर गिरजावे तो बडी हानि होतीहै दक्षिण वगैरह बहुत जगह रजस्वलाकी छायासे आंखों चलीगई, बिचारे जन्मभर दुःखी हुए यह हमने भी प्रत्यक्ष देखाहै

इसलिये ऐसे रोगोंमें गृहस्थलोग ढूंढियोंकी रजस्वला साध्वी आदि मलीन स्त्रियोंका परहेज रखनेके लिये अपने घरोंके दरवाजे बंध रखते हैं यह प्रसिद्ध ही है। और गूंगडेवाली अपनी स्त्री के साथ गृहस्थोंको काम-भोगका परहेज नहीं होता परंतु रजस्वला स्त्रीके साथ चाररोज तक काम भोगका सर्वथा परहेज होता है, जिसपर भी यदि कोई अज्ञान वश रजस्वलाके साथ काम-भोग करे तो उससे धर्म कर्म कुलमर्यादा, लक्ष्मी व संप शांति आदिकी हानि करने वाली दुष्ट संतती पैदा होती है। रजस्वला अशुद्ध स्त्रीके कर्तव्यों में अंगचेष्टामें व मनके विचार वगैरह में भी अनेक तरहका अंतर रहताहै। रजस्वलाके पालन करने योग्य नियम और शुद्धिकी मर्यादा का विधान धर्मशास्त्रोंमें, वैद्यक शास्त्रोंमें, तथा सर्व उत्तम जातिवाले पढेलिखे समझदार लोगोंमें प्रसिद्धहीहै इसलिये गूंगडेकी तरह रजस्वलाकी अशुद्धिका परहेज नहीं रखनेवाले ढूंढिये और तेरहापंथियोंकी बडीभूलहै।

७४. जिसप्रकार किसी स्त्रीको प्रतिक्रमण, स्तोत्रआदिका स्मरण करनेका हमेशा नियम होवे तो वह रजस्वलाके समय मनमें अपना नित्य कर्तव्य करे परंतु सूत्र का पाठ उच्चारण न करे जिसपरभी यदि कोई अनसमझ नवकार आदिका सूत्रपाठ उच्चारण करे तो ज्ञानावर्णीय कर्म बंधे। इसीतरह रजस्वलास्त्री अपने हाथसे साधुको आहार आदि भी न दे किंतु दूसरे किसीको बुलवाकर उनको उनके हाथसे दिलावे, आप भावना भावे। यदि ऐसी दशामें कोई भूलसेभी अपने हाथोंसे साधुको आहार आदि देवे तो उससे शुद्ध धर्म कार्यों में विघ्नभूत साधुकी बुद्धि खराब होने वगैरह अनेक अनर्थ होतेहैं, इसलिये ऐसा करना योग्य नहींहै।

७५. यदि कोई शंका करेगा कि पेटमें खून भरा हुआ है वही रजस्वलावस्थामें बाहर निकलताहै, उसमें कोई दोषनहींहै, यहभी अनसमझकी बातहै क्योंकि पेटमें विष्टा-पैशाब-हाड-मांस आदि भरे हुएहैं परंतु तेजस-कारमण शरीरके संयोगसे शरीरके अंदर होनेसे विकार भाव वाले नहींहोते उससे उनकी अशुद्धि नहीं मानी गई और शरीरके बाहर निकलनेपर हवाके स्पर्श से विकार भाववाले होतेहैं जिससे उनकी अशुद्धि मानी गईहै। उससे हाड, मांस, विष्टा, खून वगैरह जिस जगह पर गिरे हों उस जगह सूत्र पढना, स्वाध्याय करना,

व्याख्यान देना व प्रतिक्रमण आदिका उच्चारण करनेकी सूत्रोंमें मनाई कीहै। और ऐसी वस्तु पडी हो वहांपर कोईभी समझदार भोजन नहीं करते यह प्रसिद्ध बातहै इसलिये रजस्वलाकीभी अशुद्धि मानना योग्यहै।

---

७६. रजस्वलाकी तरह जन्म-मरण आदिके सूतकमेंभी नित्य नियमके कार्य श्रावक-श्राविकाओंको मौन होकर मनमेंही करने चाहियें परंतु धर्मशास्त्र, नवकरवाली, आनुपूर्वी या नवपद-चौवीशीके गट्टे-फोटो-यंत्र आदि धार्मिक वस्तुओंको छूना, हाथ लगाना योग्य नहींहै। और साधु-साध्वियोंको पुत्रके जन्ममें १० रोज, पुत्रीके जन्ममें ११ रोज, व मृत्यु होने वाले घरमें १२ रोजतक उनके घरका आहार-पानी नहीं लेना चाहिये। तथा प्रसूतवतीके लिये बनाये हुए लड्डु आदिभी लेना योग्य नहींहै।

७७. यदि कोई शंका करेगा कि रजस्वला व जन्म-मरणमें मुनिको दान देनेकी और शास्त्र पढनेकी मनाई करनेमें कुछ फायदा नहीं है, किंतु अंतराय पडती है, यह भी अनसमझ की बात है, क्योंके देखो जिस तरह अशुद्ध जगहमें, मलीन परिणामोंसे और शरीर की व वस्त्रकी अशुद्धिसे यदि उत्तम मंत्रका जाप किया जावे तो उससे कार्य सिद्धि कभी नहीं होती और अनेक तरहके विघ्न (अनर्थ) खडे होतेहैं। तथा शाम-सवेरे-मध्यान-मध्यरात्रि, आसोज चैत्रकी असज्झाई, महामारी, चंद्र-सूर्यका ग्रहण, राजाकी मृत्यु, उत्पात, भूमिकंप, युद्ध, अकालवर्षा, गाज, बीज इत्यादि कारणोंमें सूत्रपढे, वाचना देवे तो बुद्धिकी मलीनता, विघ्नोंकी उत्पत्ति व ज्ञानावर्णीय कर्मोंका बंध और जिनाज्ञाकी विराधनासे संसार बढनेका बडा अनर्थ होताहै, इसलिये ऐसे कारणोंमें सूत्र पढनेकी मनाईकीहै, उससे अंतराय नहीं बंधता किंतु भगवान्‌की वाणीका बहुमान भक्ति पूर्वक विनय होताहै जिससे ज्ञानावर्णीय कर्मोंका नाश होकर शुद्ध ज्ञानकी प्राप्तिसे अनेक लाभ होतेहैं। उसी प्रकार रजस्वला व जन्म-मरणकी अशुद्धि में मोक्षकी प्राप्ति करने वाले अतीव उत्तम मंत्ररूप शास्त्र पाठोंका उच्चारण करनेसे परम उत्तम सर्वज्ञ भगवानकी वाणीकी अवज्ञा होतीहै, उससे अनेक दोषआतेहैं इस लिये रजस्वला व जन्म-मरणादिके सूतकमें नवकार आदि किसीभी सूत्र पाठका उच्चारण करना योग्य नहींहै। और पहिलेके शूरवीर मुनिमहाराज स्मशान भूमिमें मौनपने कायोत्सर्ग ध्यानमें खडे रहते परंतु

वहांपर सूत्रकी स्वाध्याय नहीं करते थे, इसीतरह से ढूंढिये-तेरहापंथियोंकोभी अशुद्ध जगहमें, शरीर की व वस्त्रकी अशुद्धिमें और रजस्वला तथा सूतकमें नित्य नियमके कार्यमें सूत्रपाठका उच्चारण करना नहीं चाहिये किंतु होट, जबान, दांत न हिलाते हुए मनमें मौनदशामें कार्य करने चाहियें ।

७८. फिरभी देखिये- अशुद्ध कर्तव्य वाला, मलीन परिणाम वाला, अशुचि शरीर वाला मनुष्य अपने हाथोंसे खाने पीने की वस्तु दूसरों को देगा तो उसको खाने-पीनेवालेके ऊपर उसकी मलीनता का प्रभाव अवश्य पडताहै, यह तत्त्व दृष्टिकी सूक्ष्म बातहै इसलिये समझदार लोग मलेच्छ व दुष्ट मनुष्यके हाथकी वस्तु नहीं खाते । इसी तरहसे रजस्वलाके हाथसे बनाई हुई रसोई या हाथोंसे दी हुई भोजनकी वस्तु उनके कुटुंब वालोंको और साधु- साध्वी आदि धर्मी जनोंको लेना व खाना पीना योग्य नहींहै । ऐसेही जन्म-मरणआदिके सूतककाभी परहेज रखना उचितहै । ढूंढिये व तेरहापंथी साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविकाओंको इन बातोंका पूरा २ ज्ञान नहींहै इसलिये रजस्वलाके व जन्म-मरण वगैरहके अशुद्धि सूतककी पूरी २ मर्यादाका पालन नहीं करते तथा इनके शास्त्रोंमें इनबातोंकी मर्यादाका विधि विधान का लेखभी नहींहै । तोभी मंदिरमार्गी श्रावक-श्राविकाओंकी देखा देखी लोक लज्जासे कोई २ थोडासा कुछ पालन करतेभीहैं परंतु पूरा तत्त्व नहीं समझते और पूरी २ मर्यादोंका पालनभी नहीं करसकते इसलिये इनोंके समाजमें इन बातों की सर्वत्र प्रवृत्ति नहीं है इसीसे महेश्वरी, अग्रवाल, ब्राह्मण, श्रावगी आदि उत्तम जातिवाले लोग इनलोगोंकी मलीनता सम्बन्धी बडी निंदा करतेहुए बिचारे बहुत कर्म बंधन करतेहैं । अपने पिंडेको इनको हाथ लगाने छुने नहींदेते, यदि कोई भूलसे हाथ लगा दे तो कई लोग अपने पिंडे(मटके)को फोड डालतेहैं बडा झगडा होताहै, यहभी हमने कलकत्ता, अमरावती वगैरहमें प्रत्यक्ष देखाहै । और वे लोग ढूंढिये, तेरहापंथी साधुओंको अपने चौकेके पासभी नहीं आने देते, बडी अप्रीति करतेहैं, इसलिये ढूंढिये और तेरहापंथी साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविकाओंको खास उचितहै कि रात्रिजल, रजस्वला, सूतक वगैरह अपने समाजकी निन्दाके कारणोंको अपने २ समाजमें सब जगहसे जल्दीसे दूर करके व्यवहारकी शुद्धिसे समाजके ऊपर मलीनता के भ्रष्टताके लगेहुए कलंक को धोकर शुद्ध उज्वलताकी छाप जगतमें बैठावें और लोगोंके कर्म

बंधनके झगडे व विरोध भावके कारणोंको मिटावें, यही मेरा हित बुद्धि का कथनहै।

७९. यदि कोई ऐसा समझेगा कि लोग निंदा करें तो हमारा क्या लेवें, उनके कर्म बंधेंगे हमारे तो कर्म टूटेंगे, यहभी, बडी अनसमझ की बातहै, क्योंकि देखो जिसप्रकार कोई उत्तम साधु नाम धराकर मांस आदि अभक्ष वस्तु खाने लगे अथवा किसी अकेली स्त्रीके साथ एकांतमें गुप्त रीतिसे परिचय करे जिससे लोग उसकी निंदा करें उससे उसके कर्म टुटते नहीं किंतु निंदा करानेके निमित्त कारण होनेसे विशेष बंधतेहैं। उसी प्रकार अज्ञान दशासे अनुचित निंदनीय व्यवहार करने पर लोक निंदाकरें उससे कर्म टुटते नहीं किंतु लोक विरुद्ध निंदनयि कर्तव्य करने से समाजकी, धर्मकी, साधु-श्रावक पदकी हिलना अवज्ञा करवानेके हेतु बननेसे दुर्लभ बोधिके महान् कर्मोंका बंध होकर उससे अंनत संसार बढताहै। जिससे तप-जप आदि द्रव्य क्रिया सब धूलमें मिलकर बडा अनर्थ होताहै, इसलिये 'लोक निंदा करें तो हमारा क्या लेवें' इत्यादि मिथ्यात्वका झूठा भ्रम दूर करके समाजकी शोभा बढे वैसा शुद्ध व्यवहार वाले बननाही परम हितकारीहै।

---

८०. ढूंढिये कहतेहैं कि "ढूंढत ढूंढत ढूंढलिया सब, वेद पुराण कुराणमें जोई। ज्यों दही मांहीसु मक्खण ढूंढत, त्यों हम ढूंढियोंका मत होई॥१॥" इस प्रकार हमने वेद, पुराण, कुराणमेंसे ढूंढकर हमारा दया धर्म निकाला है, इसलिये हमारा ढूंढिया नाम पडाहै ढूंढियोंकी यहभी अनसमझकी बात है, क्योंकि पढनेवाला विद्यार्थी कहलाताहै परंतु पढेबाद विद्यार्थी नहीं कहा जाता और अटवीमें रास्ता भूलनेवाला रास्ता ढूंढताहै जिससे ढूंढनेवाला ढूंढक कहलाताहै, परंतु सरल रास्ते चलने वाला कभी ढूंढक कहा नहीं जाता। वैसेही ढूंढियों को सर्वज्ञ भगवान्का सच्चा धर्म रूप सम्यग्दर्शनका रास्ता अभीतक नहीं मिला जिस से अभीतक भ्रममें पडेहुए अटवीमें रास्ता भूलने वालोंकी तरह ढूंढरहे हैं, उससे ढूंढिये कहलातेहैं। और दूसरी बात यहभीहै कि तीर्थंकर भगवान् को केवलज्ञान व केवलदर्शन उत्पन्न होनेसे जगतमें लोकालोकके सब भाव प्रत्यक्ष देखकर जानलेतेहैं फिर उपदेश देतेहैं ऐसे सर्वज्ञ भगवान्के शास्त्रोंमें सब तरह से संपूर्ण दयाका स्वरूप व उपदेश मौजूदहै इसलिये सर्वज्ञ भगवान्की आज्ञा मुजब चलने वाले सब जैनियोंको दयाके

स्वरूपके लिये वेद, पुराण, कुराण ढूंढनेकी कुछभी जरूरत नहीं है। जिसपर भी सर्वज्ञ शास्त्ररूप अमृतके समुद्रमेंसे ढूंढियोंको दयाका पूरा २ स्वरूप न मिला उससे अज्ञानियोंके बनाये वेद, पुराण, कुराण आदि मिथ्यात्वरूप जहर के समुद्रमेंसे दया ढूंढने वालों की विवेक बुद्धि कैसी समझनी चाहिये। तत्त्वदृष्टिसे विचार किया जावे तो वेद, पुराण कुराण ढूंढ (देख) कर मत चलानेवाले जैनी कहलानेके योग्य ही नहीं हो सकते। जैसे 'मिथ्यात्वीकी विपरीत बुद्धि होती है' उसी तरह ढूंढियोंकीभी विपरीत बुद्धि होगई है जिससे सर्वज्ञ शास्त्र मुजब द्रव्य और भाव दयाका पूरा २ स्वरूप ढूंढिये समझ सके नहीं इसलिये सर्वज्ञ शास्त्र छोडकर वेद, पुराणके नामसे अपना दया धर्मका नयामत चलाया फिर सर्वज्ञ शासनके नामसे फैलाया यह भोले जीवोंको भ्रम में डालनेकी कैसी मायाचारीहै। वेद, पुराणमें, यज्ञ होममें पशु बलिकी व कुरानमें बकरीदकी रौद्र हिंसाको धर्म मान लियाहै, वैसेही ढूंढियों नेभी वासी, विदल, सहत, आचार, कंदमूल, मक्खण, जलेबी, आदि खानेमें और जिन प्रतिमा की व पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंकी निंदा करने में तथा जैन समाज में संपशांति का उच्छेद करके घर २ में भेद डाल कर कलेश फैलाने में व अशुद्ध व्यवहार करके समाजकी निंदा करवानेमें दया धर्म मानलियाहै, इन बातोंका विशेष विचार पाठक स्वयं कर सकतेहैं।

---

८१. ढूंढिये अपनेको २२ टोलोंके नामसे प्रसिद्ध करतेहैं, इनके मतको फैलाने वाले २२ पुरुष हुएहैं, इसलिये २२ टोले कहलातेहैं उसपर लोग हंसी उडाने लगे कि टोले पशुओंके होतेहैं, जैन साधुओं के समुदायका नाम गच्छ, कुल, शाखा आदिहैं परंतु टोले नहीं. इससे ढूंढियोंको टोलोंके नामसे शर्म आने लगी जिससे टोले कहना छोडकर स्थानक वासी, साधुमार्गी नाम कहने लगेहैं, तोभी जो २२ टोलोंके नामकी जगतमें छाप पडगईहै, वह अब नहीं मिट सकती।

---

८२. ढूंढिये अपनेको स्थानक वासी कहलाना अच्छा समझते हैं, यहभी अज्ञान दशाहै, देखो- मठमें रहने वाले उस मठके मालिक ममत्व रूप परिग्रह वाले मठवासी कहे जातेहैं और सर्वज्ञ शासनके साधु मकान आदिका ममत्वभाव रूप परिग्रहका त्याग करनेवालेहैं इसलिये अनगार कहलातेहैं जिससे सच्चे जैनियोंको स्थानक वासी कहलाना यहभी सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्धहै।

---

८३. ढूंढिये अपनेको साधुमार्गी कहतेहैं, यहभी सर्वथा अनुचितहै, जैनशासनमें सर्वज्ञ भगवान् तीर्थनायक जिनेश्वर महाराजके नामसे सर्वज्ञ शासन, जैनमार्ग, अर्हत् प्रवचन आदि नाम प्रसिद्धहैं। जिनेश्वर भगवान्रूप महाराजाके आचार्य-उपाध्यायरूप मंत्री (दीवान) कोटवालके हाथके नीचे साधुपद तो एक छोटे सीपाई समान है। जिसतरह राजा महाराजाके नामकी मर्यादा उठाकर अपने नामकी मर्यादा चलाने वाला सीपाई गुन्हगार होताहै। उसी तरह जिनेश्वर भगवान्के सर्वज्ञमार्ग-अर्हत्मार्ग आदि नामोंके बदले ढूंढियेलोग साधुमार्गी नाम चलातेहैं, इस से साधुमार्गी नाम चलाने वाले सब ढूंढिये जिनेश्वर भगवान्की आज्ञा उत्थापन करनेके गुन्हगार बनतेहैं।

८४. फिरभी देखिये आवश्यक, उववाई आदि आगमोंमें "निर्ग्रंथ प्रवचन" नाम आयाहै यहभी तीर्थंकर भगवान्के उपदेश दियेहुये और गणधर महाराजोंके रचेहुए द्वादशांगीका नामहै, उससे निर्ग्रंथ प्रवचन यहनाम तीर्थंकर-गणधरोंका कहाजाताहै. जिससे जैनसमाजमें जितने साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविकाएं होतेहैं वहसब जिनेश्वर भगवान् के उपदेश दियेहुए मार्गके अनुसार चलने वाले होनेसे जैनी कहलातेहैं इसलिये तीर्थंकर-गणधर महाराजोंके नाम चलानेके बदले ढूंढिये लोग अपना नाम बढानेके लिये साधुमार्गी नाम चलातेहैं इससे तीर्थंकर भगवान्की आशातना करनेके दोषी बनतेहैं।

---

८५. ढूंढियेअपनामूलनाम लुंकागच्छ कहतेहैं यहभी जिनाज्ञाविरुद्धहै, जैनशासनमें गणधर पूर्वधरादि प्रभावकआचार्यके नामसे गच्छ (साधुओंके समुदायका नाम) कहा जाताहै परंतु गृहस्थके नामका गच्छ नहीं कहा जाता. लुंका आचार्य-उपाध्याय या साधु नहींथा किंतु गृहस्थथा, जब यतिलोगोंके पासमें लुंका अशुद्ध पुस्तक लिखने लगा तब यतियोंने लुंकासे पुस्तक लिखवाने बंद करदिये, उससे लुंकाकी आजीविका (रोजी) मारी गई जिससे लुंका यतियोंके ऊपर नाराज होकर निंदा करताहुआ यतियोंकी प्रतिष्ठा व आजीविकाका उच्छेद करनेके लिये जिनप्रतिमाकी उत्थापना करनेका संवत् १५३५ में लुंकाने अपना नया मत चलाया. लुंकाको जैनशास्त्रोंका तत्त्वज्ञान नहींथा उससे अनेक बातें जैनशासनकी मर्यादाके विरुद्ध चलाईहैं, वेही अंधरूढिकी शास्त्रविरुद्ध बातें आजतक ढूंढियोंमें चलरहीहैं उन्हींका उल्लेख

इसग्रंथमें किया गयाहै इसलिये गृहस्थका चलाया हुआ मतको गच्छ कहना, उसीमें रहना, उसकी आज्ञा मुजब चलना यही सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्धहै ।

८६ यदि ढूंढिये कहेंगे कि उससमय श्वेतवस्त्र वाले सब यति हिंसाकरने वाले भ्रष्टाचारी होगयेथे, सच्चा उपदेश देनेवाला कोईनहीं रहाथा इसलिये लुंकाजीने सच्चा दयाधर्मका उपदेश देनेके लिये अपना नया मत चलायाहै. यह कथनभी सर्वथा झूठहै क्योंकि महावीर भगवान् ने भगवती सूत्रके २०वें शतकके ८वें उद्देशमें फरमायाहै कि मेरा शासन २१००० हजार वर्षतक चलता रहेगा. इसीसे साबित होताहै कि पंचम आरेके अंततक वीर भगवान्के शासनमें शुद्धसाधु अवश्यही होते रहेंगे परंतु किसी समय शुद्ध साधुओंका अभाव नहीं होगा, जिससे हरसमय (कभी बहुत; कभी कम) संयमीसाधु मौजूदरहतेहैं उससे जिस समय लुंकाजीने अपना नयामत चलाया उससमय शुद्ध संयमी सच्चा उपदेश देनेवाले बहुत साधु विद्यमान विचरहतेथे जिसपरभी ढूंढियेलोग सब श्वेतवस्त्र वाले साधुओं को हिंसाकरने वाले भ्रष्टाचारी ठहरातेहैं सो सर्वथा प्रकारसे वीरप्रभूकी आज्ञा भंग करके प्रत्यक्ष उत्सूत्र प्ररूपणासे अपना संसार बढातेहैं और शुद्ध साधुओंको भ्रष्टाचारी असाधु ठहरानेरूप मिथ्यात्वकी प्ररूपणासे भोले जीवोंकोभी उन्मार्गमें डालनेके दोषी बनतेहैं ।

८७. ढूंढिये कहतेहैं कि 'भस्मग्रह उतरा और लुंकाजीका दयाधर्म प्रसरा' याने- वीरभगवान् मोक्षपधारे तब भगवान्के जन्म नक्षत्रपर दोहजार वर्षकी स्थितीवाला भस्मग्रह बैठा था उससे भगवान्का दयाधर्म लुप्त होगयाथा हिंसाधर्म बढ गयाथा जिससे भस्मग्रह उतरा तब लुंकाजीने पीछा दयाधर्मका प्रचार किया, ढूंढियोंका यह कथनभी सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्धहै क्योंकि देखो जैनशास्त्रोंमें यह प्रसिद्धही बात है कि- नवमें भगवान् श्रीसुविधिनाथ स्वामी मोक्षपधारे बाद कितनाही समय जानेपर साधुओंका सर्वथा अभाव होगया तब गृहस्थ श्रावक लोग धर्मका उपदेश देनेलगे, उन्होंकी परंपरामें लोभ आदिसे शुद्ध धर्मका लोपहोकर मिथ्यात्व फैलगया जिससे असंयति (पाखंड) पूजारूप अच्छेरा मानागयाहै, उसके बाद दशवें भगवान श्रीशीतलनाथ स्वामीने दीक्षालेकर केवलज्ञान प्राप्त करके शुद्धधर्मकी प्रवृत्ति, फिर-

से चलाया. इसकथनसे अच्छीतरहसे साबितहोताहै कि सर्वज्ञशासनमें लोपहुए धर्ममार्गको तीर्थंकर भगवान्के सिवाय कोईभी गृहस्थ कभी नहीं चला सकता परंतु धर्मके नामसे पाखंड अवश्य फैला सकताहै। इसी तरहसे वीरप्रभुके शासनमें शुद्धसंयम पालन करनेवाले बहुत आचार्य, उपाध्याय और साधु विद्यमान विचरने वाले मौजूद होनेपरभी, जिसके जाति-कुलका ठिकाना नहीं, जिसका जैनसमाजमें जन्म होनेकाभी कोईप्रमाण नहीं, जिसने स्याद्वाद नयगर्भित अतीव गहन आशय वाले जैनशास्त्रोंको किसी गुरुके पास पढेनहीं, जिसको संस्कृत प्राकृत व शुद्ध भाषाकाभी पूरा २ ज्ञान नहीं, जिसने किसी तरहके श्रावकके व्रतभी लिये नहीं, ऐसा सर्वथा धर्मके अयोग्य, अज्ञानी पुस्तक लिखकर रोजी चलाने वाला लुंका लिखारीकी पुस्तक लिखनेकी रोजी बंध होने से सर्वसाधुओंको भ्रष्टाचारी; झूंठा उपदेशदेने वाले बनाकर भगवान्का सच्चा धर्म लोपहुआ ठहराकर फिर आप सच्चा उपदेश देनेवाला भगवानके धर्मका प्रचारक बनगया, यहतो असंयति पूजारूप प्रत्यक्षही झूंठा ढोंगहै इसलिये लुंकाजीने भस्मग्रहके उतरनेपर दयाधर्मके नामसे सर्वज्ञ शासनमें भोलेजीवोंको भ्रममें डालनेकेलिये मिथ्यात्व फैलायाहै।

८८. फिरभी देखिये जिसको दुष्टग्रह लगे उसको उससमय कष्ट पडताहै और ग्रहउतरनेपर कष्ट मिटकर शांति मिलतीहै, यह बात प्रसिद्धहीहै। इसीतरहसे भस्मग्रहके कारण १२वर्षी कालमें तथा विधर्मी धर्मद्वेषी उपदेशकों व राजाओंके उपद्रवसे हजारों जैन साधुओंकी और लाखों श्रावकोंकी हानि वगैरह अनेक उपद्रव जैन समाजपर हुए परंतु भस्म ग्रहके उतरेबाद वैसे उपद्रव मिटे और फिरसे शांतिपूर्वक जैन समाजकी प्रभावना होने लगीहै। श्रीहीरविजय सूरिजीने तथा श्रीजिनचंद्र सूरिजी वगैरहोंने अकबर आदि बादशाहोंको प्रतिबोधकर अमारी घोषणा के परवाने करवाये उसीके अनुसार आजतक बहुत जगह पर्युषणा आदि जैन पर्वोंमें अमारी घोषणा होतीहै, लाखों जीवोंकी दया पलरहीहै। इसलिये कल्पसूत्रमें बतलाये मुजब भस्म ग्रहके कारण जिन साधुओंकी पूजा-मान्यता कम होतीथी उन्हींकी परंपरा वाले साधुओंकी भस्म ग्रह के उतरे बाद पूजा-मान्यता विशेष होने लगीहै (इस विषय संबंधी तथा जिनराजकी मूर्त्ति पूजा संबंधी ढूंढियोंकी सब शंकाओंके समाधान श्रीविजयानंद सूरि (आत्माराम) जी महाराजने " सम्यक्त्व शल्यो-

द्धार " नामा ग्रंथमें अच्छी तरहसे खुलासा सहित लिखाहै। श्रीआत्मानंद जैन पुस्तक प्रचारक मंडल, रोशन मुहल्ला आगरा से मंगवाकर उस ग्रंथको पाठक गण अवश्य पढें, बडा उपयोगीहै सब बातोंका खुलासा होजावेगा। और इस पंचमआरेमें २३ उदय होनेवालेहैं, याने- पंचमओरमें २३ वार जैनशासनकी विशेष प्रभावना होनेका लेखहै उसमें प्रथम उदयमें श्रीसुधर्मस्वामी, रत्नप्रभ सूरिजी, भद्रबाहुस्वामी व संप्रतिराजाको प्रतिबोधनेवाले आर्यसुहस्तीसूरि तथा विक्रमादित्यराजाके प्रतिबोधक सिद्धसेन दिवाकरसूरि और हरिभद्रसूरि आदि प्रभावक आचार्योंने जैन शासनकी बहुत प्रभावनाकी। और दूसरे उदयमें श्रीजिनेश्वरसूरिजी, अभयदेवसूरिजी, दादाजी जिनदत्तसूरिजी तथा १८ देशोंमें अमारी घोषणा करनेवाले कुमारपाल महाराजाको प्रतिबोधनेवाले हेमचन्द्राचार्य व महमद तुघलख बादशाहको प्रतिबोध करनेवाले जिनप्रभ सूरिजी आदि प्रभावक आचार्योंने महेश्वरी, अग्रवाल, ब्राह्मण, क्षत्रीय आदिको उपदेश देकर लाखों जैनीश्रावक बनाये, अनंत उपकार किये, बडी प्रभावना की इसलिये पूर्वाचार्योंसेही और उन्हींके वंश परंपराके साधुओंसेही राजा महाराजा-बादशाह-मंत्री-शेठ आदि बडों बडों के प्रतिबोधसे शासन प्रभावना पूर्वक जगतके उपकारके और जीवदया वगैरहके बडे २ धर्मकार्य हुएहैं, होतेहैं व आगे होवेंगे परंतु लुंका व लुंकाकी परंपराके अनुयायी ढूंढिये-तेरहापंथियोंने अन्य लोगोंको प्रतिबोधकर जैनसमाजकी वृद्धिकरनेके बदले जैनसमाजमें घर २ में, गांव २ में फुट डालकर दोपक्ष करके कलेश-निंदा-विरोधभावसे हानिके सिवाय कुछभी लाभनहीं कियाहै इसलिये ढूंढिये लोग दयाके नामसे ऐसे परमोपकारी शुद्धसंयमी शासन प्रभावक पूर्वाचार्योंको भ्रष्टाचारीका झूठा कलंक लगानेका महान् पाप बांधकर भोले जीवोंको मिथ्यात्वमें डालकर बिचारे अपनामत फैलाते हुए संसार बढातेहैं।

८९. ढूंढिये लोग अपने धर्मकी महिमा बढानेके लिये लुंकाको बड़ाधनाढ्य साहुकार व्रतधारी श्रावक मान बैठेहैं परंतु लुंकाजीके मातापिता-जन्मभूमिकेगांवकानाम,जाति-कुटुम्ब आदि किसी बातका कोईभी प्रमाण नहींहै परंतु पुस्तक लिखनेवाले लिखारी लहीये ब्राह्मणाकी तरह लुंकाजीभी लिखारीका धंधा करके अपनी रोजी चलाताथा यह बात प्रसिद्धहीहै. इसलिये किसी बातका प्रमाण बिनाही अपनी कल्पना

मात्रसे लुंकाजीको धनाढ्य श्रावक मान लेना प्रत्यक्ष झूंठहै ।

और लुंकाजीने व लुंकाजीकी परंपरावाले ढूंढियोंने अपनी पूजा मान्यता बढानेके लिये जैनसमाजमें कैसे २ अनर्थ फैलायेहैं इसबातका प्रत्यक्षप्रमाण इसग्रंथ को पूरा २ पढनेवाले पाठक अच्छीतरहसे समझलेंगे।

९०. इस प्रकार ढूंढिये, बाईसटोले, स्थानकवासी, साधुमार्गी व लुंकागच्छ यह ढूंढियोंके मतके पांचोंही नाम सर्वथा जिनाज्ञा विरुद्ध और श्वेतांबर जैन समाजसेभी अनुचित होनेसे अब ढूंढियोंको अपने मतका कोई अच्छा नया छठा नाम ढूंढकर निकालना चाहिये।

९१. कितनेक ढूंढिये अपने स्थानकवासी नामकी तरह मंदिर मार्गियोंको देरा (मंदिर) वासी कहतेहैं और उनकी देखादेखी कितनेक मंदिर मार्गी कच्छदेशादि वाले भोलेलोग अपनेको देरावासी कहतेहैं। स्थानकमें ठहरनेसे स्थानकवासी नामपडाहै परंतु मंदिरमें तो जिनराजके दर्शन भक्तिके सिवाय अधिक ठहरनेमें बड़ा दोष बतलायाहै इसलिये भूलसेभी मंदिर मार्गीयोंका देरावासी नाम कभी नहीं कहना चाहिये।

(ढूंढियोंकी महान् बडी झूंठी गप्पका नमूना देखो)

[दंडा रखनेका निर्णय.]

९२. ढूंढिये कहतहै कि बारावर्षी दुष्कालमें रांक भीक्षुक लोग साधुओंकी रोटी खोस कर लेनेलगे तब उसका बचाव करनेके लिये साधुओंने अपने हाथमें दंडा रखना शुरु कियाहै परंतु सूत्रोंमें साधुको दंडा रखनेका नहीं लिखा, यहभी ढूंढियोंका कथन झूंठहै, क्योंकि भगवती, निशीथ, आचारांग, प्रश्नव्याकरण, व्यवहार, दशवैकालिक आदि मूल आगमोंमे जगह २ पर साधुओंको दंडा रखनेको कहाहै।

९३. देखो ढूंढियोंका छपवाया हुआ 'भगवती' सूत्रका आठवां शतकका छट्ठा उद्देश पृष्ठ १०९९—११०० में साधुको आहार, पात्र, गुच्छा, रजोहरण आदि उपकरणोंकी दान विधिमें दंडा संबंधी ऐसा पाठहै:—

" निग्गंथं च णं गाहावईकुलं जाव केई दोहिं पडिग्गहेहिं उवनिमंतेज्जा, एगं आउसो अप्पणो पडिभुंजाहि एगं थेराणं दलयाहि, सेय संपडिगाहेज्जा तहेव जाव तं नो अप्पणो परिभुंजेज्जा नो अण्णेसिं दा-

वए सेसं तंचेव जाव परिट्ठवियव्वे सिया एवं जाव दसहिं पडिग्गहेहिं। एवं जहा पडिग्गह वत्तवव्वया भणिया, एवं गोच्छग रयहरण चोलपट्टग कंबल लट्ठी संथारग वत्तव्वया भाणियव्वा जाव दसहिं संथारएहिं उवनिमंतेज्जा जाव परिट्ठवियव्वे सिया ॥ ६ ॥"

९४. अर्थः- "गृहस्थके वहां पात्र निमित्त गयेहुये साधुको कोई दो पात्रकी निमंत्रणा करे और कहे कि अहो आयुष्मन्! इसमेंसे एक-पात्र तुम रखना और दूसरा पात्र स्थविरको देना फिर उस पात्रको लेकर जहां स्थविर होवे वहां साधुको जाना गवेषणा करते हुए कदाचित स्थविर नहीं मिले तो वो पत्रा स्वतः को रखना नहीं, वैसेही अन्य को देना नहीं, परंतु एकांतमें जाकर परिठना. जैसे दो पात्रका कहा वैसेही तीन चार यावत् दश पात्रका जानना और जैसे पात्रका कहाहै वैसेही गोच्छक, रजोहरण, चोलपट्टक, कंबल, यष्टि, व संथाराकी वक्तव्यता दशतक कहना ॥ ६ ॥"

९५. देखो- ऊपरके मूलपाठ और अर्थपर विवेक बुद्धिसे विचार करना चाहिये कि जिसप्रकार पात्र, गुच्छा, रजोहरण, चौलपट्टक, कंबल आदि उपकरणोंको साधु गृहस्थोंके घरसे यावत् दश दश तक लेकर उनमेंसे एक एक अपनेलिये रक्खे और बाकीके नव २ अन्य साधुओंको दे. यह उपकरण लानेकी रीतिहै। उसी प्रकार यष्टि दंडा व संथाराभी दश दश तक लेकर दूसरे साधुओंको देनेकी सूत्रकी आज्ञाहै, इसीसे अच्छी तरह सिद्धहोताहै कि सब साधुओंको रजोहरण, कंबल, संस्थरा आदिकी तरह दंडा भी खास उपयोगी वस्तु होनेसे ऊपरके आगम पाठकी आज्ञा मुजब अवश्यही रखना चाहिये । जिसपरभी ढूंढिये साधु रखते नहीं और संवेगी रखतेहैं उसका निषेध करतेहैं, यहतो प्रत्यक्षही सूत्रकी आज्ञा विरुद्ध होकर उत्सूत्र प्ररूपणासे बड़ा अनर्थ करतेहैं।

९६. ढूंढियोंका छपवाया निशीथ सूत्रका प्रथम उद्देश पृष्ठ ८ में ऐसा पाठ हैः—

"जे भिक्खू दंडयं वा, लट्ठियं वा अवलेहणियं वा, वेणुसूंई वा अणउत्थिएण वा गारत्थीएण वा, परिघट्ठावेवई सो चंवमगिलओ गमओ अणुगंतव्वो जाव साइज्जाई ॥"

९७. अर्थः- "जो साधु दंडा [धनुष्य प्रमाण] लाठी [शरीर प्रमाण], कर्दम फेडनी (चौमासे आदिमें कर्दमसे पांव भरावे उसे पु-

छनेकी लकडीके बांसके खपाटिये) इनको अन्य तीर्थिक तथा गृहस्थके पास सुधरावे समरावे यावत् सब उक्त प्रमाने कहना यावत् अच्छा जाने " तो प्रायश्चित्त आवे।

९८. फिरभी इसी निशीथ सूत्रके पांचवें उद्देशके पृष्ठ ५८-५९वें में ऐसा पाठहैः— " जे भिक्खू दंडगं जाव वेणुसुयणं वा पलिभिंदियं २ परिट्ठावेई, परिट्ठवंतं वा साइज्जई ॥ ६७ ॥ "

९९. अर्थः- "जो साधु दंडेको यावत् वांसकी खपाटी पूर्ण स्थिर चलने योग्यहै उसको भांग तोड परिठावे परिठातेको अच्छा जाने ॥ ६७ ॥" तो प्रायश्चित आवे

१००. फिरभी देखो ढूंढियोंकेही छपवाये प्रश्नव्याकरण सूत्रके पृष्ठ १६६ में " पीटफलग, सिज्जा, संतथारंग वत्थं, पाय, कंबल, दंडक, रयहरणं, निसेज्जं,चोलपट्टग, मुहपोत्तियं, पादपुंछणादि भायण भंडोवहि उवगरणं "

१०१. अर्थः- " बाजोट, पाटपाटला, शय्या, संतथारा, वस्त्र, पात्रं, कंबल रजोहरण, चोलपट्टा, मुखवास्त्रिका, पादपुंछन, मात्राआदिकका भाजन भंड तुंबादि उपधि वस्त्रादि होवे "

१०२. देखिये ऊपरके प्रश्नव्याकरण सूत्रके मूलपाठमें "दंडक" पाठ मौजूदहै तोभी ढूंढियोंने अपने बनाये अर्थमें दंडाका अर्थ उडा दिया यही कपट सहित प्रत्यक्ष उत्सूत्र प्ररूपणाहै।

१०३. आचारांग सूत्रके सोलहवें अध्ययनके प्रथम उद्देशके दूसरे सूत्रमें सर्वसाधुओंको दंडा रखनेका बतलायाहै तथाहिः–

"से अणुपविसित्ताणं गामं वा जाव रायहाणिं वा णेव सयं अदिन्नं गिण्हेजा; णेव पणेणं अदिन्नं गिण्हावेज्जा, णेव-पणेणं अदिण्णं गिण्हत्तं समणुंजाणेज्जा। जेहिं वि सार्द्धि संपव्वइए, तेसिंपि याइं भिक्खू छत्तयं वा मत्तयं वा दंडगं वा चम्मच्छेदगणं वा तेसिं पुव्वामेव उग्गहं अणुण्णविय अपडिलेहिय अपमज्जिय णो गिण्हेज्ज वा पगिण्हेज्जवा तेसिं पुव्वामेव अणुपविय पडिलेहिय पमाज्जिय गिण्हेज्ज वा पगिण्हेज्ज वा ॥ "

१०४. इसपाठमें साधुको गांवमें नगरमें यावत् राजधानीमें अपनेको किसी तरहकी कोईभी वस्तु मालिक के बिनादिये लेना नहीं, दूसरोंके पाससे लेवाना नहीं, व लेतेहो उनकी अनुमोदना भी करनीनहीं (अच्छा समझना नहीं) और विशेष तो क्या कहना जिसके साथमें दीक्षाली

हो, पासमें रहतेहों उन साधुके गर्मीमें या वर्षामें ओढनेरूप छत्र (वस्त्र), मात्रक, दंडा व फोडा फुनसी गडगुंबडादिको साफ करनेके लिये किसी गृहस्थके पाससे लाये हुए चाकू कैंची आदि चर्मच्छेदक वगैरह वस्तुओमेंसे कोईभी वस्तु उन साधुकी आज्ञा लिये बिना और देखकर पूजे प्रमार्जे बिना लेना कल्पेनहीं, इसलिये उन साधुकी आज्ञा लेकर उस वस्तुको पूज प्रमार्जकर लेना कल्पे।

१०५. देखो उपरके पाठमें दीक्षा लेने वाले साधुके दंडा आदि वस्तु कहीहै इसीसे सिद्ध होताहै कि जिसप्रकार पैशाब करनेका मात्रक आदि साधुके हमेशा काममें आनेवाली उपयोगी वस्तुहै, उसी प्रकार दंडाभी आहर, विहार निहार आदि कार्योंमें बाहर जानेके लिये हमेशा उपयोगमें आनेवाला होनेसे सबसाधुओंको रखना पडताहै उसका निषेध करना बडी भूलहै।

१०६. दशवैकालिकसूत्रके चौथे अध्ययनमें दंडा संबंधी नीचे मुजब पाठहै:—

“से भिक्खू वा भिक्खूणी वा संजय-विरय-पडिहय-पच्चक्खाय-पावकम्मे दिया वा राओ वा एगओ वा परिसागओ वा सुते वा जागरमाणे वा से कीडं वा पयंगं वा कुंथुं वा पिपीलिअं वा हत्थंसि वा पायंसि वा बाहुंसि वा उदरंसि वा सीसंसि वा वत्थंसि वा पडिग्गहंसि वा कंबलंसि वा पायपुछणंसि वा रयहरणंसि वा गोच्छगंसि वा उडगंसिवा दंडगंसि वा पीढगंसि वा फलगंसि वा सेज्जगंसि वा संत्थारगंसि वा तहप्पगारेउवगरणजाए तओसंजयामेव पडिलेहिय पडिलेहिय पमज्जिअ पमज्जिअ एगंतमवणेज्जा णोणसंघायमावज्जेज्जा ॥ ६ ॥ „

१०७. उपरके पाठमें संयमवान, तपस्या करनेमें आशक्त व व्रत पच्चक्खाणसे पापकर्मको दूर करने वाले ऐसे साधु साध्वी दिनमें वा रात्रिमें अकेलेमें वा मनुष्योंकी पर्षदामें सोतेहुए वा जागृत दशामें कीडे, पतंगीये, कुंथुये, कीडीयें, आदि त्रसजीव अपने हाथोंमें, पैरोंमें, बाहुमें, साथलमें, पेटमें, मस्तकमें, या वस्त्रमें, पात्रमें ,कंबलमें, पादपुछनक (दंडासन) में, रजोहरणमें, गुच्छामें, जलकेभाजनमें, दंडामें, पाटीयेमें, चौकीमें और संत्थारा आदि अन्यभी साधुसाध्वीकेउपयोगी उपकरणोंमें किसी प्रकारके त्रस जीव चढे होवें उन्होंको पूज-प्रमार्जनकर यत्नापूर्वक एकांत जगहमें परिठवें (रखदें) परंतु पीडा करें नहीं।

१०७. देखिये खास सूत्रकार महाराजने वस्त्र पात्र कंबल की तरह दंडा संथारा आदि भी उपकरण बतलाये हैं, इसलिये उपरके पाठकी आज्ञा पालन करने वाले सब साधुओं को वस्त्र पात्र कंबल की तरह दंडाभी रखना उचित है। जिसपरभी ढूंढिये लोग कंबल तथा दंडा रखने का निषेध करने वाले प्रत्यक्ष ही सूत्र विरुद्ध होकर उत्सूत्र प्ररूपणा करके जिनाज्ञा की विराधना करते हैं।

१०८. यदि ढूंढिये कहें कि जिस प्रकार दँडा हमेशा साथमें रखतेहो उसी प्रकार पाट, पाटले, संथारा आदि सब उपकरणभी साथमें क्यों नहीं रखते। इस बातके उपर मेरे को इतनाही कहनाहै कि संयम धर्म की रक्षाके लिये साधुके उपकरण बहुत तरहके होतेहैं, जिसमेंसे रजोहरण, मुंहपत्ति, कंबल व दंडा आदि कितनेक उपकरण हर समय काममें आनेवाले होनेसे हमेशा साथमें रखे जातेहैं। और गुच्छा पादपुंछनक, संथारा, पुस्तक, पाट, पाटले आदि कितनेक उपकरण हर समय काममें नहीं आते किंतु किसी समय काममें आते हैं, वह हमेशा साथमें नहीं रक्खे जाते, परन्तु ठहरनेकी जगह पर पडे रहतेहैं। जैसे साधु आहार-पानीके लिये गृहस्थोंके घरोंमें जावे तब पाट पाटले पुस्तक वगैरह साथमें नहीं लेजाता तोभी वह उपकरण साधुके कहे जाते हैं। इसलिये दंडाकी तरह पाट पाटले संथारा आदि सब उपकरण हमेशा साथमें ले जानेकी कुयुक्ति करना या हमेशा दंडा साथमें रखने का निषेध करना सूत्रविरुद्ध होनेसे सर्वथा अनुचितहै।

१०९. यदि ढूंढिये कहें कि उपरमें बतलाये हुए भगवती सूत्रके पाठ में स्थविर साधुको दंडा रखने की आज्ञादीहै परंतु सबके लियेनहीं, यह भी अनसमझकी बातहै क्योंकि देखो-जिसतरह उत्तराध्ययन सूत्रमें श्रीवीरभगवान्ने गौतमस्वामीको समय मात्रभी प्रमाद नहीं करनेका उपदेश दिया है वैसेही सर्व साधुओंके लियेभी प्रमाद त्याग करनेका समझ लियाजाताहै। इसी तरहसे साधुओंके समुदायमें स्थविर साधु बडे होते हैं इसलिये स्थविरका नाम ग्रहण कियाहै, उसीके अनुसार सर्व साधुओंके लियेभी दंडा रखनेका समझलेना चाहिये और स्थविर को देनेके लिये लायेहुए उपकरण दूसरे साधुओंको देनेकी मनाईकी, उसका तात्पर्य यहीहै कि स्थविरको देनेका कहकर स्थविरके बदले दूसरे साधुको देवे तो देने वालेको मिथ्याभाषण, लेनेवालेको अदत्तादान

और गृहस्थ दातारको अप्रीति होनेसे सर्वज्ञ शासनकी लघुता होकर मिथ्यात्व बढे इत्यादि अनेक दोष आतेहैं, इसलिये जिसको देनेके लिये जो वस्तु लावे वह उसीको देना उचित है, परंतु 'जिसको जरुरत होगी उसको दूंगा' ऐसा सामान्य नियमसे कोईभी वस्तु लाकर हर एक साधुको देनेमें कोई दोषनहीं इसलिये भगवती सूत्रके उपरमें बतलाये पाठ के अनुसार तपस्वी, रोगी, नवदीक्षित, गुरु, आचार्य, उपाध्याय आदि सबको वस्त्र, पात्र, कंबल, दंडा, संथारा आदि उपकरण लाकर देने चाहियें। इनकी भक्तिसे बडी निर्जरा होती है।

११०. व्यवहार सूत्रके आठवें उद्देश में भी स्थविर साधुको दंडा रखनेका लिखा है वहांभी स्थविरका प्रसंग होनेसे स्थविरका नाम बतलाया है परंतु निशीथ, आचारांग, दशवैकालिक आदि आगम प्रमाणानुसार अन्य सर्व साधुओंको दंडा रखनेका निषेध कभी नहीं हो सकता।

१११ यदि ढूंढिये कहें कि दंडासे जीवोंकी हिंसा होतीहै जिससे दंडा शस्त्ररूप है, इसलिये रखना योग्य नहीं है, यहभी अनसमझकी बात है क्योंकि देखो हाथ, पैर, वस्त्र, पात्र, रजोहरण व दंडा आदि उपकरणोंसे उपयोग पूर्वक यत्नासे काम लिया जावे तो सब संयम धर्मके आधार भूत जीव दयाके हेतु हैं और बिना उपयोग अयत्नासे काम लिया जावे तो हाथ, पैर, रजोहरण आदिभी जीव हिंसा करने वाले शस्त्ररूप होते हैं इसलिये सब उपकरणोंमें प्रमाद हिंसाका हेतुहै और अप्रमाद जीव दयाका हेतु है जिसपरभी दंडाको हिंसा करने वाला शस्त्ररूप कह कर निषेध करने वाले ढूंढियोंकी बडी भूल है।

११२. फिरभी देखिये किसी समय प्रमादवश किसीके रजोहरणसे भी जीव हिंसा हो जावे तोभी सर्व साधुओंके संयम धर्मका हेतु होनेसे रजोहरणका निषेध कभी नहीं हो सकता। इसी तरहसे कभी प्रमादवश भूलसे किसी साधु के दंडासेभी कुछ हिंसा होजावे तोभी दंडा सर्व साधुओंके संयम धर्मकी तथा शरीरकी रक्षा करनेवाला होनेसे दंडा रखने का निषेध कभी नहीं होसकता जिसपरभी अज्ञानतासे निषेध करने वाले सब ढूंढिये, तेरहापन्थी उत्सूत्र प्ररूपक बनते हैं।

११३. ढूंढिये कहतेहैं कि दंडा भय करनेवाला क्रोधमूर्त्तिका हेतु है इसलिये रखना योग्य नहींहै, यहभी अनसमझकी बातहै क्योंकि खास ढूंढियेही वृद्ध साधु-साध्वियोंको दंडा रखना मान्य करतेहैं। अब विचार

करना चाहिये कि यदि दंडा भय करनेवाला क्रोधमूर्त्तिका हेतु होवे तो ढूंढियों के वृद्ध साधु-साध्वियोंकोभी कभी नहीं रखना चाहिये परंतु रखते हैं इसलिये ऐसी २ कुयुक्ति करके साधुओंको दंडा रखनेका निषेध करना बड़ी भूलहै।

११४ (दंडा हमेशा साथमें रखनेमें १५ गुणोंकी प्राप्ति)

१-भगवती, आचारांग, प्रश्नव्याकरण, निशीथ, दशवैकालिक, ओघ-निर्युक्ति, प्रवचन सारोद्धार आदि अनेक शास्त्रोंमें तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंने साधु-साध्वियोंको दंडा रखनेका बतलाया है इसलिये दंडा रखने वाले मूल आगमोंकी तथा तीर्थंकर गणधरादि महाराजों की आज्ञाके आराधक होते हैं।

२-जिसप्रकार रजोहरण व मुंहपत्ति सर्व साधु-साध्वी हमेशा पासमें रखतेहैं, जिससे जब काम पडे तब पूंजन प्रमार्जन आदिका काम लिया जाताहै। उसीप्रकार सब साधु-साध्वियोंको ग्रामांतर व गुरु वंदनादि के लिये बाहर जाते समय या गृहस्थोंके घरोंमें आहार-पानी वगैरहके लिये जाते समय दंडाभी हमेशा साथमें रखना चाहिये, जिससे कभी सर्प आदिके सामने आजानेपर दंडेसे अलग हटाकर संयमरक्षा, तथा शरीर रक्षाका लाभ लेसके और १-२ माल (मजले) चढने उतरने में भी दंडाका सहारा रहताहै। अन्यथा कभी सीढी चढते उतरते पैर चुक जावे तो हाथ, पैर, पात्र आदिका नुकसान होजावे, उस समयभी दंडा बडा सहारा देकर सबका बचाव करताहै।

३-गृहस्थोंके घरोंमें आहार लेते समय दंडाके सहारेसे आहारके झोली-पात्रे सब अधर रखकर आहार लिया जाताहै, परंतु दंडा नहीं रखने वाले ढूंढिये और तेरहापंथी साधु-साध्वी घर २ में जमीनके उपर झोली-पात्रे रखदेते हैं उससे जमीनपरके कीडी, कुंथुये आदि सूक्ष्म-बादर अनेक जीवोंकी हानि होतीहै। तथा अन्यभी जाहिर उद्घोषणा नंबर दूसरे के पृष्ठ ४८ वें में बतलाये मुजब अनेक दोष आतेहैं।

४-रास्तामें चलते समय कभी अकस्मात कांटा या ठोकर लगने पर या खाड आदिमें पैर चुक जानेपर नीचे गिरने लगें उससमय दंडा के आधारसे शरीर, वस्त्र, पात्र आदिका बचाव होता है अन्यथा दंडा के अभावसे नीचे गिर जावें तो अनेकजीवोंका नाश होनेसे संयमकी

तथा आत्माकी विराधना होती है ऐसे समयमें भी दंडा संयम-शरीर की रक्षा करताहै।

५-विहार कर दूसरे गांव जाते समय रास्तामें भूखसे या तृषासे साधु या साध्वी चलनेमें अशक्त होगये हों या चक्र आने लगते हों ऐसे समय वहांपर गांवमें पहुँचनेके लिये दंडा बडा सहायक होता है।

६-रास्तामें नदी-नाले आदिमें जल होवे और नीचे की भूमि देखनेमें नहीं आती हो तो दंडासे पहिले जलका माप करके पीछे उतरा जाताहै परंतु दंडाके अभावमें थोडे जलके भरोसे उतरने पर अधिक उंडा जल आजावे या कीचडमें पैर फँस जावे या चीकनी मट्टीमें फीसल जावे तो वहां पर बडी आफत आतीहै और यदि गिरजावें तो अनंतजीवोंकी हानि व पुस्तक आदिका नुकसान होताहै ऐसे समयमेंभी दंडा बडी सहायता देकर सबका बचाव करताहै।

७-कभी थोडी देरकेलिये बहुत जल वाली नदी उतरते समय नावमें बैठना पडे तो नावमें चढते और उतरते समय दंडाका सहारा होताहै अन्यथा कभी गिर जावें तो शरीर-संयम की हानि व लोगों में हंसीका हेतु बने इसलिये दंडा बडा काम देताहै।

८-वर्षा चौमासामें आहार-पानी वगैरह को जाते समय रास्तामें कीचडमें पैर न फीसलने पावे इसलिये दंडा बडी सहायता देताहै

९-रास्तामें चलते समय काटने वाले कुत्ते या सिंगडे मारने वाले गऊ-भैंस वगैरहसेभी दंडा बचाव करताहै। यद्यपि दंडासे साधु कुत्ते आदिको मारतें नहीं किंतु लकडी देखकर स्वभावसेही वह पशु दूर रहते हैं साधुके नजदीक नहीं आते और ढूंढिये साधु को कभी कुत्ते भौंकते हुये काटनेको पासमें आतेहैं तब उसका बचाव करनेके लिये ढूंढिये साधु अपने ओघेको कुत्ते के मुंहके सामने हिलातेहैं उससे वायु कायकी विशेष हिंसा होतीहै तथा कुत्ता विशेष चिडता हुआ क्रोधसे खूब भौंकताहै और कभी ओघेको मुंहमें पकडभी लेताहै, बडा कौतुक बनताहै ऐसे समय हाथमें दंडा होतो ओघेकी ऐसी विटंबना करनेका समय कभी न आवे, वहां भी शरीर संयमका बचाव दंडा करताहै।

१०-हाथमें दंडा होनेसे उपर मुजब विहार समय जंगलमें कभी चौर या हिंसक प्राणीसेभी बचाव होताहै।

११-विहारमें कभी तपस्वी आदि चलनेमें अशक्त होतो दंडों से कपडेकी झोली बनाकर उसमें उनको बैठाकर गांव में ले जा सकतेहैं।

१२-बहुत साधुओंके लिये आहार लाते समय दंडाके अभावमें आहारके वजनसे हाथ दुखने लगताहै उस समय गृहस्थोंके घरोंमें या रास्तामें किसी जगह आहारके पात्रें जमीनपर रखना अनुचितहै और दंडा हाथमें होतो दंडाके सहारेसे हाथको तकलीफ नहीं पडती ऐसे समयमेंभी दंडा सहायता देताहै।

१३-छोटीदीक्षा वाले साधुको आहारादि करनेकेलिये बडी दीक्षा वाले साधुओंसे अलग बैठनेकी मांडली करनेके काममेंभी दंडा आताहै।

१४-दंडामें मेरुका आकार तथा दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप रत्नत्रयीकी व पंच महाव्रतकी सूचनारूप रेखा होनेसे दंडा हर समय संयम धर्ममें अप्रमादी रहनेका स्मरण करानेका हेतु है।

१५ दर्शन-ज्ञान-चारित्रकी आराधना करनेसे मोक्ष प्राप्तिका कारण शरीरहै और शरीरकी रक्षा करने वाला दंडा है; इसलिये कारण कार्य भावसे दर्शन-ज्ञान-चारित्र तथा मोक्षका हेतुभी दंडाहीहै।

इत्यादि अनेक गुण दंडा रखनेमें प्रत्यक्षहैं, मूल आगमोंमेंभी दंडा रखने संबंधी उपरमें बतलायेहुये पाठ मौजूदहैं; इसलिये बारा वर्षीकालमें साधुओं ने अपने हाथमें दंडा रखना शुरू कियाहै ऐसा कहनेवाले सब ढूंढिये व तेरहापंथी लोगों को प्रत्यक्ष झूठ बोलकर उत्सूत्र प्ररूपणा से भोले जीवोंको व्यर्थ मिथ्याभ्रममें डालकर अपने कर्म बंधन करने योग्य नहीं हैं।

११५ फिरभी देखिये जिसप्रकार मध्यान समय सूर्यके सामने धुल फैककर अपने मस्तकपर डालने वाले अनसमझ बालजीव सूर्यकी हंसी करते हुये बडे खुशी होतेहैं। उसीप्रकार तीर्थंकर भगवानके फरमाये हुये मूल आगमानुसार दंडा रखनेवाले संवेगी साधुओंको दँडी दँडी कहकर हंसी करते हुये बडेखुशी होनेवाले सबढूंढिये तीर्थंकर भगवान्की, मूल आगमोंकी व पूर्वधरादि आचार्य,उपाध्याय और सर्व साधुओंकी अवज्ञा आशातना करनेके दोषी बनतेहुए अपनी आत्माको कर्मोंसे मलीन करते हैं। इसलिये ऐसे महान् पापसे डरनेवाले ढूंढियें- तेरहा पंथियोंको कभीभी किसीभी संवेगी साधुको दंडी दंडी कहना योग्य नहींहै और

अज्ञानदशा; द्वेषबुद्धि से आजतक दंडी२ कहाहोवे या लिखाहोवे उसका शुद्धभावसे प्रायश्चित्त लेना चाहिये।

११६. यदि ढूंढिये कहेंगे कि दीक्षालेते समय सब साधुओंको दंडा रखने का सूत्रोंमें नहींलिखा इसलिये रखना योग्य नहींहै, यहभी अनसमझकी बातहै क्योंकि देखो संथारा, कंबल, पादपुंछनक, गोच्छा, चोलपट्ट, चद्दर, पुस्तक वगैरह सब तरहके उपकरण दीक्षालेते समय ग्रहण करनेका ढूंढियों के मानेहुए सूत्रोंमें किसीजगह नहींलिखा तोभी इन उपकरणों के नाम सूत्रों में बतलायेहैं उससे सब साधुरखतेहैं, उसीतरह उपरके उपकरणोंके साथ दंडाभी सूत्रोंमें बतलायाहै इसलिये रखना योग्यहै, जिसपरभी ऐसी २ कुयुक्तियें करके निषेध करनेवाले ढूंढिये प्रत्यक्ष झूठा हठ करतेहैं।

११७. यदि ढूंढिये कहेंगे कि कभी कीचड़ खाड़ आदि कारण पडे तब दंडा रखना चाहिये परंतु बिना कारण हमेशा रखना योग्य नहींहै यहभी अनसमझकी बातहै क्योंकि सर्वज्ञ शासनमें सर्वकाल संबंधी सर्व जीवों केलिये व्यवस्था होनेसे 'इरियावही' करनेमें, तथा 'अन्नत्थ ऊससिएणं' के पाठमें तथा व्रत पच्चक्खाणोंके पाठों में बहुत तरहके आगार (कारण) रखतेहैं वह सबकारण हमेशा सबके लिये नहींबनते किसीके कभी काम-पडताहै तोभी वह सब आगारोंके पाठ सबको हमेशा बोलने पडते हैं। इसीतरह से दंडाभी शरीर व संयमका रक्षक होनेसे सबको हमेशा रखना चाहिये। और खास ढूंढियोंकेही छपवाये निशीथ सूत्रके पृष्ठ ८ में शरीर के माप प्रमाणे लाठी रखने का बतलाया है तथा 'दंडी दंभ दर्पण' के पृष्ठ ९९ वें में दंडा का कान तक लंबा प्रमाण बतलाया है। दंडा और लाठी इन दोनों शब्दों में तत्त्व दृष्टिसे कोई विशेष भेद नहीं है इसलिये व्यवहारमें दोनोंको दंडा कहतेहैं उपरमें बतलाये हुए सूत्रोंके पाठोंमें दोनों तरहके पाठ मौजूदहैं इसलिये कान तक लंबा दंडा रखना कहां लिखाहै ऐसी कुतर्क करना व्यर्थ है। और कान तक लंबा दंडा रखने वाले संवेगी साधुओंकी निंदा करनेवाले सब ढूंढियों की बड़ी भूल है।

११८. ढूंढिये कहतेहैं कि प्रश्न व्याकरण सूत्रमें पंचम संवर द्वार-में साधुके १४ उपकरण बतलायेहैं उसमें मूलपाठमें तथा टीकामेंभी दंडा रखनेका नहीं बतलाया इसलिये रखना योग्यनहींहै, यहभी अनसमझकी बातहै क्योंकि इन्हीं प्रश्नव्याकरण सूत्रमें तीसरे संवर द्वारमें "पीढ-

फलग-सेज्जा-संथारग-वत्थ-पाय-कंबल-डंडग-रयहरण-निसेज्ज-चोलपट्टय मुहपोत्तिय-पायपुंछणाइ भायण भंडोवहि उवगरणं" इस मूल पाठमें तथा "पीठफलक-शय्या-संस्तारक-वस्त्र-पात्र-कंबल-दंडक-रजोहरण-निषद्या-चोलपट्टक-मुखपोतिका-पादप्रोंछनादि भाजन भांडोपध्युपकरणं" इस टीकाके पाठमें ओघा मुंहपत्ति आदि उपकरणोंके साथही दंडाभी बतला-दियाहै जिससे पंचम संवर द्वारमें दूसरी वार न बतलावें तोभी कोई दोषनहींहै इसालिये प्रश्नव्याकरण सूत्रके नामसे या इनसूत्रकी टीकाके नाम से दंडा रखनेका निषेध करने वाले मायाचारी सहित मिथ्याभाषी समझ ने चाहिये। और १४ उपकरण रखनेका ढूंढिये कहतेहैं परंतु १४ उपकर-णोंका पूरा २ अर्थ नहीं समझते व गौचरीकी झोलीके उपर पल्ले, कंबल आदि १४ उपकरण पूरे २ रखतेभी नहीं इसलिये ढूंढिये साधु-साध्वियों का वेष, उपकरण, कर्तव्य, श्रद्धा और प्ररूपणाभी सूत्र विरुद्धहै, इसका विशेष खुलासा मूलग्रंथमें लिखाहै। तथा पादपुंछनक आदि बहुत तरह के उपकरण साधुके काममें आनेवाले साधु रखसकतेहै इसलिये १४ उप-करणोंका सामान्यपाठ देखकर १४ उपकरणोंसे ज्यादे उपकरणोंका निषेध कभी नहीं होसकता।

(खास निवेदन)

११९. जिनाज्ञानुसार सत्य मार्गपर चलनेकी चाहना रखनेवाले सब ढूंढियें और तेरहापंथियोंको मेराइतनाही कहनाहै कि हमेशा मुंह-पत्ति बांधनेमें ३६ दोषआतेहैं किसीभी जैनशास्त्रमें हमेशा मुंहपत्ति बांधी रखनेका लिखाभी नहीं (इसबातका थोड़ासा खुलासा उपरमें लिखा है, विशेष मूल ग्रंथमें आगे देखलेना) इसलिये व्यर्थ शास्त्रों की व कुयु-क्तियोंकी झूंठी २ आडलेना छोडकर इस खोटी कुरीतिकी अंधरूढिको जल्दीसे त्याग करके सत्यबात ग्रहण करो। और चौथमलजी ने आज्ञा देकर अपने शिष्य शंकरलालजीके पास मुखवस्त्रिका निर्णय में, प्यार-चंद्रजी पास गुरुगुणमहीमा में, कुंदनमलजीने मिथ्यात्व निकंदन भास्कर में, अमोलक ऋषिजीने जैनतत्वप्रकाश में, पार्वतीजीने ज्ञानदीपिका व सत्यार्थ चंद्रोदय जैन, आदिमें जिस २ ने हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहरानेकी उत्सूत्र प्ररूपणा की हो, करवाई हो या बांधनेमें जिनाज्ञाकी श्रद्धा रखी हो, बांधी हो, बंधवायी हो उन सबको यह ग्रंथ पूरा २ पढकर अपनी भूलकी आलोयणा लेकर आत्मको शुद्ध करना योग्यहै। यदि

चौथमलजी आदिकी तरफसे उपरमें बतलाई हुई किताबों मे हमेशा मुंहपत्ति बांधनेका ठहरानेके लिये कुयुक्तियों करके झूंठे २ शास्त्रों के नाम लिखकर भोले लोगोंको भ्रममें न डाले जाते और न बांधनेवाले संवेगी साधुओंके उपर बहुत अनुचित आक्षेपोंकी वर्षा न होती तो मेरेको यह ग्रंथ बनानेका कोई कारण नहींथा इसलिये इस ग्रंथके बनानेमें मूल कारण भूत चौथमलजी आदि को ही समझना चाहिये।

१२०. कितनेक ढूंढिये कहतेहैं कि हम वाद विवादका झगड़ा नहीं चाहते तुम तुमारी करो हम हमारी करें हमतो संप चाहतेहै, यह कथन मध्यस्थ भावका नहींहै किंतु मायाचारीका है, यदि सरल हृदयसे शुद्धभावहो तो हमेशा मुंहपत्ति बांधने वगैरहकी झूंठी बातोंका अवश्य त्याग करें, जबतक झूंठी बातोंका आग्रह त्याग न करें तबतक संप चाहनेवालोंका मध्यस्थ भाव कभी नहीं होसकता, यहतो भोले जीवोंको बहकाकर भले बननेकी बहाने बाजीहै। इसलिये ऐसी माया प्रपंचकी बातें छोडकर जिसतरह श्रीबुंटेरायजी, आत्मारामजी, मूलचंदजी, वृद्धिचंदजी आदि सैकडों साधु साध्वियोंने और हजारों श्रावक-श्राविकाओंने मुंहपत्ति बांधनेके झूंठे मतको त्याग किया है। उसीतरह आत्मार्थी सब ढूंढिये-तेरहापंथियोंकोभी करना उचितहै परंतु लोकलज्जासे खोटी अंधरूढिको चलाना योग्य नहीं है। ॥ इति शुभं ॥

श्रीवीरनिर्वाण २४५२, विक्रमसंवत् १९८३ कार्तिक शुदी ११. हस्ताक्षर श्रीमन्महोपाध्यायजी श्री १००८ श्री सुमति सागरजी महाराजके चरण सेवक पं० मुनि-मणिसागर-जैन धर्मशाला, राजपूताना, कोटा.

आगमानुसार मुंहपत्ति का निर्णय तथा जाहिर उद्घोषणा नम्बर १-२-३ तथा ४-५-६ और श्रीजिनप्रतिमा को वंदन-पूजन करनेकी अनादि सिद्धि आदि ग्रंथ भेट मिलने के ठिकानेः—

१. श्री महावीर जैन लायब्रेरी, राजपूताना, कोटा.
२. श्रीजिनदत्तसूरिजी ज्ञानभँडार, ठि० गोपीपुरा, शीतलवाडी, गुजरात, सूरत.
३. श्रीजिनकृपा चन्द्रसूरिजी जैन ज्ञान भँडार, ठि० मोरसलीगली, मालवा इन्दौर.
४. श्रीआत्मानंद जन पुस्तकप्रचारकमंडल, ठि० रोशनमुहल्ला, यू० पी० आगरा.
५. श्रीआत्मानंद जैन ट्रेक्ट सोसायटी, पंजाब, अंबाला शहर.
६. श्रीआत्मानंद जैन सभा, काठियावाड, भावनगर.
७. श्री जिन चारित्र सूरिजी, बडा उपाश्रय, मारवाड, बीकानेर.

॥ जाहिर खबर ॥

जैन साधु धर्मलाभ कहतेहैं, यहभी अनादि मर्यादाहै परन्तु नई रीति नहींहै । वीरप्रभुके समयमें नंदीषेणमुनि वैश्याके पाडेमें गौचरी गये तब धर्मलाभ कहाथा, उसके प्रति उत्तरमें तुक मिलानेके लिये वैश्या ने अर्थलाभ कहाथा, यह बात प्रसिद्धही है । धर्मलाभ आशीर्वाद का वचनहै और दयापालो यह उपदेशका वचनहै, आशीर्वाद और उपदेश के वचनोंकी ढूंढियोंको समझ नहींहै इसलिये हर समय सब जगह पर दयापालो कहा करतेहैं १, पहिलेके श्वेतवस्त्रवाले यतिलोग शुद्ध संयमी थे परंतु अभी बहुतसे यतिलोग आरंभ-परिग्रहवाले होगये और ढूंढिये लोग यतियोंकी निंदा करतेहुये जिनमूर्त्तिका भी उत्थापन करनेलगे इस-लिये यतियोंसे भिन्नता दिखलानेके लिये तथा अनादि जिनमूर्तिकी मा-न्यताकी रक्षाकरनेके लिये व शुद्धसंयम धर्मकी जगतमें महिमा बढाने के लिये संवेगी नाम रखकर शुद्ध संयमी साधुओंने पीलेवस्त्र कियेहैं २, जिनराजके जन्माभिषेक, दीक्षा-केवलज्ञान-निर्वाण कल्याणक महोत्सव, नंदीश्वरद्वीपमें शाश्वतचैत्योंमें अट्ठाईमहीमा, जिनप्रातिमाकी पूजादि धार्मिक कार्योंमें देव-देवी-श्रावक-श्राविका आदिको छकायकी दया, १८ पापस्थानक सेवनका त्याग व जिनराजके अनंत गुणोंका स्मरण ध्यान हो-नेसे अशुभ कर्मोंकी निर्जरा, शुभ पुण्यानुबंधी पुण्यकी वृद्धि और मोक्ष की प्राप्तिहोतीहै ३, जिनप्रतिमाकी जल-चंदन-पुष्प आदि अष्ट प्रकारी पूजामें जीवहिंसाका पाप बतलाकर निषेध करनेवाले ढूंढिये-तेरहापं-थियोंकी अनसमझ और प्रत्यक्ष अनंत लाभकी प्राप्ति ४, जिनमूर्ति-तीर्थ-यात्राकी मान्यता वीरप्रभुके मोक्ष पधारे बाद नई शुरु नहीं हुई है किंतु अनादिसेहै और इसका निषेध करनेवालोंको छकायकी हिंसा, १८पापस्था-नक सेवन करनेका पाप और जिनेश्वर भगवान् के गुणोंका स्मरण, परम वैराग्य, शुभभावना वगैरह महान् धर्म कार्योंकी अंतरायका दोष आता है५, जिनप्रतिमाके द्वेषसे ढूंढियोंने मूलसूत्रों में व रामचरित्र-श्रीपाल चरित्रादिमें कैसे २ पाठ और अर्थ बदलकर नये २ कौन २ पाठ बनाकर डा-लेहैं६, चैत्य विवाद निर्णय ७, निक्षेप विवाद निर्णय ८, इत्यादि बातोंका तथा तेरहापंथियोंकी दया-दान विषयी सब शंकाओंका निर्णय ९, इन सबका निर्णय " श्रीजिनप्रतिमाको वंदन-पूजन करनेकी अनादि सिद्धि " नामा ग्रंथमें तथा " जाहिरउद्घोषणा नंबर ४-५-६" में लिखनेमें आवेगा ।

इस ग्रंथको छपवाने संबंधी द्रव्य सहायक महाशयोंके नाम.

रु० ५०१) श्रीयुत, सेठजी गणेशदासजी हमीरमलजी,
१५१) श्रीयुत, सेठजी पानाचंदजी उत्तमचंदजी,
१०१) श्रीयुत, एक गुप्त श्रावक,
१०१) श्रीयुत, देवराजजी प्यारेलालजी जिन्दाणी,
१०१) श्रीयुत, गुलाबचंदजी सोभागमलजी मुथा,
१०१) श्रीयुत, हिम्मतरामजी जुहारमलजी सिंगवी,
१०१) श्रीयुत, चंदनमलजी रीखबदासजी लुणीया,
१०१) श्रीयुत, सीरेमलजी भूरामलजी सिंगी,
१०१) श्रीयुत, जयचंदजी तेजमलजी मालू दलाल,
६१) श्रीयुत, फतेराजजी गजराजजी मुणोत,
५१) श्रीयुत, भेरुदानजी केशरीमलजी मालू,
५१) श्रीयुत, सोभागमलजी सांकला,
५१) श्रीयुत, सूरजमलजी वागचार,
२५) श्रीयुत, मुनीमजी बालुरामजी चौबे ब्राह्मण,
२५) श्रीयुत, शेरसिंहजी जोरावरसिंहजी कोठारी,
२५) श्रीयुत, चिन्तामणदासजी, बरडियारी धर्मपत्नी,
२५) श्रीयुत, वृद्धिचन्दजी डाकलिया,
२५) श्रीयुत, मोतीलालजी भणसाली,
२५) श्रीयुत, समीरमलजी कल्याणमलजी बांठिया,
२५) श्रीयुत, दोलतराम जी फतेचंद जी अग्रवाल,
२१) श्रीयुत, पन्नालालजी बारां वाले की धर्म पत्नी,
१५) श्रीयुत, नथमलजी प्यारचन्दजी जौहरी,
१५) श्रीयुत, छगनमलजी मीश्रीलालजी बाफणा,
११) श्रीयुत, सूरजमलजी जुगराजजी बाफणा,
११) श्रीयुत, जेठमलजी आईदानजी पारख,
११) श्रीयुत, रीखभदासजी अखेराजजी पारख,
११) श्रीयुत, रीखभदासजी चिंतामणदासजी बडेर,
११) श्रीयुत, कुशलराजजी समदडीया,
११) श्रीयुत, गोवींदसिंहजी डांगी,
७) श्रीयुत, जीवराजजी भंडारी,
५) श्रीयुत, हीराचन्दजी रूपचन्दजी मुथा,
५) श्रीयुत, मोतीलालजी वस्तीमलजी धाडीवाल,
५) श्रीयुत, रीखबदासजी जेठमलजी पारख,